श्री सद्‌गुरु चरितामृत
भागवती कथा—
श्रीसीतारामजी
लेखक—
रामयत्न शरण

श्री युगल सरकार के श्री चरणों में, अनन्त श्री रामशंकरशरण जी महाराज (श्री पुजारीजी)

॥ श्री सीतारामाभ्यां नमः ॥
॥ ॐ श्री हनुमते नमः ॥
॥ ॐ श्री गुरवे नमः ॥

श्री सद्गुरु चरितामृत

श्री सीताराम जी

के

दुलहिन-दुलहा रूप के पुजारी तथा श्री सीताराम
विवाह उपासना के आचार्य
नित्यलीला लीन
श्री अवध के सन्त
श्री अनन्त रामशंकर शरण जी (श्री पुजारी जी) महाराज

का

जीवन चरितामृत

लेखक—

रामयत्न शरण

प्रथम संस्करण २००० | अगहण शुक्ल ५ संम्वत् २०३१ | न्योछावर ११. रुपया

प्रकाशक
विवहुती भवन अयोध्या
साकेत

मुद्रक
बंशीधर शर्मा
भागवत प्रेस, ८५२ मुट्ठीगंज
प्रयाग

श्री सद्गुरु चरितामृत—

अनन्त श्री रामशंकर शरणजी महाराज (श्री पुजारीजी)

चरित्रनायक की पद द्वारा वन्दना

हो सद्गुरु अवतार, गुरुवर । हो सद्गुरु अवतार ॥
नारायण नररूप बनाये, करत पतित उद्धार ॥१॥टेक॥

हो मेरे जीवन के सर्वस, मेरे प्राण अधार ।
कारण रहित कृपारस साने, दया क्षमा साकार ॥२॥

मन महान तन किये वीरान, सदा प्रेम उर धार ।
प्रेम सिन्धु रस विन्दु बरसत, गावत प्रेम मल्हार ॥३॥

धूमिल धूरि भरे तन भूषण, अवध-सरयु रज धार ।
सिया राम रङ्ग रंजित अन्तर, तन सुधि दिये बिसार ॥४॥

संग सदा साकेत की टोली, मध्य दुलह सरकार ।
सदा बसन्त सदा ही होली, नित नूतन शृङ्गार ॥५॥

जहँ देखो साकेत की लीला, लखि भूले घर बार ।
जनि कलियुग त्रेता बनि आये, युगल व्याह परचार ॥६॥

खेलत खेल खेलाड़ी अद्भुत, मनवाँ मन्द गँवार ।
उलझत सुलझत द्वंद्व तिमिर महँ, दो पद-नख उजियार ॥७॥

साधक-साध्य-साधना तू ही, तेरा एक सहार ।
आस भरोस लगाये तेरी, मेरी जाननहार ॥८॥

'सुरति' सोहागिनि जगे हृदयमहँ, हो अग जग उजियार ।
दिव्य युगलछवि निरखु नयन भरि, प्रतिपल रहउँ निहार ॥९॥

लली लला पदतल अरुणाई, सदा नयन-उर धार ।
नाँच गाइ सिय पियहिँ रिझाऊँ, यही जीवन सुख सार ॥१०॥

स्तुतिकर्ता
चरित्रनायक का ही एक कृपापात्र

अनन्त श्री विभूषित बैजनाथ शरण जी महाराज की ओर से चरित्रनायक के प्रति श्रद्धाञ्जलि

वन्दौं गुरु पद कञ्ज, कृपासिन्धु नर रूप हरि।
महामोह तम पुञ्ज, जासु वचन रविकर निकर॥

हमारे गुरुदेव (चरित्रनायक) के जीवन चरित्र लिखे जाने के अवसर पर जब उनके जानकार महान् सन्त प्रेमी एवं शिष्य मण्डल के लोग अपना-अपना अनुभव प्रकाशित करते हुए श्रद्धाञ्जलि अर्पित कर रहे हैं तब मेरे जैसे तुच्छ प्राणी का भी यह पुनीत कर्तव्य हो जाता है कि मैं भी श्रद्धा के फूल उनके पावन चरणों पर चढ़ाऊँ। यद्यपि मैं बालपन से ही उन सर्वगुण सम्पन्न, कृपासिन्धु, दयामूर्ति एवं सहृदय गुरुदेव की ही छत्र-छाया में पाला-पोषा गया, उनके सान्निध्य का सौभाग्य आजीवन ही उपलब्ध रहा, तो भी एक तुच्छ जीव होने के नाते अल्पज्ञता वश उन महाप्रभु के रहस्य को नहीं समझ पाया। फिर भी मैं अपने हृदय का उद्गार उनके पावन चरणों में समर्पित करता हूँ। मुझे तो उन्हीं की कृपामयी प्रेरणा एवं प्रकाश से अब ऐसा अनुभव हो रहा है कि स्थूल शरीर त्याग कर वे आज भी दिव्य रूप से वर्तमान हैं वहाँ भी हैं और यहाँ भी हैं। जिस प्रकार सूर्य एकदेशी होते हुए भी प्रभा रूप में सर्वदेशी बना रहता है, आज वही अवस्था हमारे गुरुदेव की है। प्रत्येक दृष्टिकोण से विचार करने पर मैं ऐसा कहने को बाध्य हूँ कि अपने समान वे आपही रहे—

"निरूपम न उपमा आन राम समान राम निगम कहैं।"

श्री महाराज जी तो आज भी हमारे साथ हैं, सदा हम सबों की देख-भाल करते हैं और प्रत्येक इच्छा की पूर्ति में सहायक होते हैं। उनके सम्बन्ध में जो कुछ भी कहा जाय थोड़ा ही है। मेरेजैसे साधन-हीन मलीन, नीच पर उन्होंने सदा ही कृपा की वर्षा की, आरम्भ से ही उन्होंने योगक्षेम किया और शरीर त्याग करते ही उन्होंने मुझे श्री अवधवास दे दिया, सन्तों का सान्निध्य, सेवा एवं दर्शन का सौभाग्य भी उन्होंने प्रदान किया। ऐसे अशरण-शरण, दयालु, कृपालु, भक्तवत्सल गुरुदेव का सदा जय-जय हो।

जैसा कि बराबर से चला आ रहा है, धर्म की अवनति होने पर स्वयं श्री भगवान किसी-न-किसी रूप में अवतरित होते हैं अथवा अपने अन्तरङ्ग नित्य परिकरों में से एक को धर्म की स्थापना तथा भक्ति प्रचार हेतु भेजते हैं। इसी प्रणाली के अनुसार हमारे गुरुदेव नित्य परिकर होते हुए भी हम सबों के कल्याण हेतु भारत भूमि में अवतरित हुए और अनेकों का उन्होंने कल्याण किया। नाम-रूप-लीला-धाम के सरस सुलभ भाव दर्शाकर उन्होंने हम सबों का मार्ग-दर्शन भी किया। अस्तु, ऐसे श्री सद्गुरु भगवान की जय-जयकार हो। बार-बार बलिहार हो।

—

श्री सद्‌गुरु चरितामृत—

श्री श्री १०८ श्री बैजनाथशरण जी महाराज

विषय सूची-अनुक्रमणिका

प्रथम खण्ड

द्वितीय खण्ड

तृतीय खण्ड

चतुर्थ खण्ड

जी सहित हमारे चरित्रनायक का शुभागमन। बिहार विधान सभा के स्पीकर श्री बाबू रामदयालु सिंहजी से हमारे चरित्रनायक का प्रथम मिलन एवं सत्सङ्ग। स्वतन्त्र श्री विवहुती-भवन स्थान का निर्माण। श्री अवध में श्री रामदयालु बाबू के साथ अन्तिम रहस्य सत्संग। श्री चित्रकूट धाम में दूसरा श्री विवाह कलेवा-उत्सव (सन् १९३७)। श्री माता जानकी देवी की अस्वस्थता एवं श्री साकेत-गमन। श्री सिद्ध किशोरी जी के लीलामय जीवन के अन्तिम चरण।

पंचम खण्ड

वर्तमान श्री विवहुती-भवन का उद्‌घाटन तथा तत्कालीन उल्लेखनीय घटनायें

९९–१०४

श्री ठठेरा मन्दिर के पुजारी-पद का त्याग तथा नवीन विवहुती-भवन में कार्यारम्भ। श्री लीला-स्वरूपों के लालन-पालन, पठन-पाठन एवं सुरक्षा-व्यवस्था। श्री विवहुती-भवन के लीला स्वरूपों की विशेषतायें। नवीन विवहुती भवन में प्रथम विवाहोत्सव। गया सम्मेलन में आठ लीला-स्वरूपों के साथ प्रथम विवाहोत्सव। श्री चित्रकूट धाम में श्री विवाहोत्सव (सन् १९३९)। हमारे चरित्रनायक के एकमात्र पुत्र का शरीरान्त (सन् १९४१)। हमारे चरित्रनायक के वेष एवं भावना गुरु श्री अनन्त सियाशरण जी महाराज (श्री मधुकर महाराज) का अन्तिम काल (सन् १९४३)।

षष्ठम खण्ड

प्रेमियों एवं शिष्यों की देखी-सुनी घटनाएँ, चमत्कार दर्शन एवं विविध अलौकिकताएँ

१०४–१५४

स्वयं भगवान् ही सेठ के रूप में आये। थोड़े भोग सामान में ही बहुत लोग पाये यथा संकल्प संसिद्धियों एवं आज्ञा प्रति हतागति (सिद्धियों) का दिग्‌दर्शन। एक ही समय पर दो स्थलों में हमारे चरित्रनायक की उपस्थिति। मात्र तीन मन भोजन सामान में पन्द्रह सौ लोगों ने भोजन किया। एक शिष्या की करुण पुकार पर चरित्रनायक द्वारा अँधियाली रात में प्रकट हो दुःख निवारण करना। ब्रह्म पिशाच योनि से उद्धार। भावल में निवास करते हुए चरित्रनायक द्वारा श्री अवध. में श्री उर्मिलाजी के स्वरूप की पुकार पर साक्षात् प्रकट हो जाना। श्री मथुरा-वृन्दावन धाम में श्री सीताराम विवाह उत्सव द्वारा अनिर्वचनीय आनन्द की वर्षा। श्री विवहुती भवन में श्री लक्ष्मी विसर्जन यज्ञ। स्वयं श्री भगवान् ने ही चरित्रनायक का रूप धारण कर श्री अवध में भंडारा सम्पन्न किया। निम्नांकित अवसरों पर श्री भगवान् ने ही चरित्रनायक का रूप धारण कर श्री विवाह उत्सव श्री अवध तथा छपरा जिले में एवं श्री राम जन्म बधाई उत्सव श्री अवध में सम्पन्न किया। लेखक की विशेषतापूर्ण शरणागति तथा परम सिद्ध महात्मा श्री अलबेला बाबा द्वारा चरित्रनायक को आत्म समर्पण। आन्तरिक सत्सङ्ग। शृंगार अवस्था में लीला स्वरूप श्री मनमोहन सरकार से चरित्र-नायक का रगड़ा झगड़ा एवं मान लीला। दरभंगा सम्मेलन पंडाल में श्री विवाहोत्सव के लिये उचित व्यवस्था के अभाव में अलग विवाह मंडप की रचना कर श्री विवाह कलेवा उत्सव सम्पन्न। चरित्रनायक द्वारा मानलीला, अनशन तथा विरह वियोग लीला के आन्तरिक रहस्य। श्री परम हंस अलबेला बाबा द्वारा चरित्रनायक का आन्तरिक परिचय—सन्त मण्डली में ब्रह्मांड-नायक जैसा। श्री ब्रह्मदेव नारायण रिटायर्ड स्टेशन मास्टर के पूर्व गुरुदेव द्वारा चरित्र-नायक के महत्व पर प्रकाश। श्री गजना धाम में श्री अलबेला बाबा द्वारा आयोजित अभूतपूर्व श्री सीताराम विवाह महोत्सव (१९५१)। जपला स्टेशन आते ही चरित्रनायक का अदृश्य हो जाना। स्वागत एवं जुलूस का दृश्य। झूले की जादू भरी झाँकी। श्री

गजना ग्राम में श्री विवाह एवं कलेवा झाँकी के चार शिकार। टिहरी रेलवे स्टेशन पर एक कृपा सूचक अनोखी घटना। देखी सुनी घटनाओं में कुछ महत्व-कारी घटनाओं के विवरण। पारिवारिककार्य भी भगवान् के ही किंकर्य हैं। अमांगलिक अन्न-वस्त्र से श्री विवाह-कलेवा करने का परिणाम। १०४ डिग्री तापमान की अवस्था में सतुआ ही औषधि बनी। बन्दा मौज न पावहीं, चूक चाकरी माहिँ। ग्राम जम्होर गया जिले में ट्रक पर सामान की रख-वाली करते हुए गर्म-गर्म खिचड़ी मिली। श्री जनक-पुर में बिना औषधि के कमला निशुनियाँ एवं चेचक रोग से मुक्त हो गयी। कानपुर सम्मेलन के अवसर पर शृंगार की कोठरी से प्रकाश पुञ्ज उदय होने से श्री वैशजी बेहोश हो गये। ग्राम वरुराज जिला मुजफ्फरपुर में श्री मांडवी जी के स्वरूप की भया-नक अस्वस्थ्यता के समय अद्भुत घटना। पेट फटकर अँतड़ी बाहर चले आने पर भी श्री वैशजी होश में। चम्पारण के जंगल में फल-मूल खाकर श्री नाम नवाह का आयोजन। दिल्ली राजधानी की एक अपूर्व घटना (१९५४) भगवान् ने बैलगाड़ी भेज डाकू से जान-माल की रक्षा की। मात्र पाँच पसेरी सामान में सारे जनकपुर के सन्तों का भंडारा। शान्ति कुञ्ज में प्रकाश पुञ्ज का दर्शन। प्रेत योनि से उद्धार। श्रीमती चन्द्रकला सहचरी का साकेत गमन। भगवान् केवल प्रेम से रीझते हैं, उपासक चाहे जिस अवस्था में रहकर उनसे प्रेम करे। हाथ से स्पर्श करते हुए ही भयानक बुखार शान्त हो गया। झूला अवसर पर गाते हुए पद में वर्णित सारा दृश्य उपस्थित हो गया। चरित्रनायक के चरणामृत ने जान बचायी। करनौती ग्राम में चरित्र-नायक ने श्री अवधबिहारी बाबू की रक्षा शत्रुओं से की। लेखक के भाई कमलाकान्त की मृत्यु का चरित्रनायक द्वारा पूर्व संकेत। श्री सरयू महात्मा प्रकट हुआ प्रकट हुआ। संसार के साथ संसार जैसा, सरकार (भगवान्) के साथ सरकार जैसा। चरित्रनायक का धनबाद में प्रथम शुभागमन। शिष्य की सारी सम्पत्ति के स्वामी गुरुदेव हैं। सतुआ खिचड़ी ही चरित्रनायक का प्रधान भोजन क्यों? चरित्रनायक के अश्रित दो भक्त रत्नों की जीवन लीला। चरित्रनायक में समदर्शिता भाव का एक नमूना।

सप्तम खण्ड

उपासना रहस्य। प्रेमाभक्ति का परिचय। प्रेमा-भक्ति प्राप्त भक्तों के लक्षण। मिथिला भाव। मिथिला भाव की विशेषता। श्री रामचरितमानस में वर्णित मिथिला भाव एवं मिथिला नगरी की झाँकी। मिथिला नगर की झाँकी भी अलौकिक। महल अट्टालिकाओं की ऐश्वर्य भरी रचना भी अलौकिक। अन्तःपुर किशोरी बाग की शोभा भी अलौकिक। अखिल ब्राह्मण नायक श्री चक्रवर्ती दशरथ राज-कुमार रामभद्र जू का मिथिला आगमन पाँव पयादे केवल एक प्रेमी रूप में। भौतिक क्षेत्र में रूप जादू का प्रभाव। मिथिला में प्रकट मूल राम रूप तत्व का तत्वान्वेषण। श्री सीतारामजी के विवाहित रूप का ही ध्यान क्यों एवं श्री विवाह उपासना क्यों? सीतातत्व।

अष्टम खण्ड

१. श्री शम्भु परमेश्वर प्रसाद एडवोकेट, पटना हाई कोर्ट
२. श्री विश्वनाथ प्रसाद, आशुलिपिक पटना हाईकोर्ट
३. श्री गुरुशरण लाल, शाखा पदाधिकारी शिक्षा विभाग, पटना सचिवालय

४. श्री जगत नारायण सिन्हा (नथुआजी) पटना
५. श्री लक्ष्मी प्रसाद शर्मा, ग्राम वृन्दावन (मुजफ्फरपुर)
६. श्री कृष्णदेव प्रसाद अवर सचिव श्रम विभाग, पटना सचिवालय
७. श्री विद्यापति सिन्हा (लाला बाबू), डाकतार विभाग पटना
८. श्री कृष्णा ठाकुर, पटना सचिवालय
९. श्रीमती सुशीला बहन, ग्राम बरुराज (मुजफ्फरपुर)
१०. श्री भास्करानन्द पाठक, वित्त विभाग, पटना सचिवालय
११. श्री पण्डित देवनारायण पाण्डेय, कार्मिक विभाग पटना सचिवालय
१२. श्री मती आशारानी धर्म पत्नी श्री मथुराप्रसाद वित्त विभाग पटना सचिवालय
१३. श्री मैथिली सहचरी, गया
१४. श्री सरयू शर्मा जिलाबोर्ड कार्यालय धनबाद
१५. श्री रामप्रिया शरणाजी चन्द्रभानुपुर, धनबाद
१६. श्री नारायण प्रसाद श्रीवास्तव झरिया साइन्स बोर्ड ऑफ हेल्थ धनबाद
१७. श्री परमानन्द राय झरिया वाटर बोर्ड धनबाद
१८. श्री शैलेन्द्रजी (मन्टूबाबू) ग्राम बरुराज (मुजफ्फरपुर)
१९. श्री शैलेन्द्रजी (मन्टूबाबू) की माँ ,, ,,
२०. श्री महेश्वर प्रसाद शाही ,, ,,
२१. श्रीमती रामतनुक देवी, ग्राम किशनपुर (सीतामढ़ी)
२२. श्री नन्द किशोर शाही ग्राम बरुराज (मुजफ्फरपुर)
२३. श्री जगदीश नारायण मिश्र ग्राम इटहा ,,
२४. श्री अवध विहारी शर्मा ग्राम दिलावरपुर ,,
२५. श्री योगेन्द्र प्रसाद शाही, ग्राम रामपुर हरि ,,
२६. श्री रामाशीष शाही ग्राम जोवर ,,
२७. श्री रामश्रेष्ठ चौधरी ग्राम सकरी सरैया (मुजफ्फरपुर)
२८. श्री कपिलदेव नरायण सिंह वकील सिवान
२९. श्री जगन्नाथ सिंह ग्राम मशरक [छपरा]
३०. श्रीमती सीता सहचरी ग्राम सदानन्दपुर [बेगुसराय]
३१. श्री नीरस चौधरी ग्राम्म मकौलिया [दरभंगा]
३२. श्री रामनन्दन ठाकुर ग्राम मुसापुर [समस्तीपुर]
३३. श्री राधाकृष्ण ठाकुर ग्राम गोही, [समस्तीपुर]
३४. श्री श्यामसुन्दरी सहचरी विवहुती भवन अवध
३५. श्री राजनन्दनी सहचरी ,, ,, ,,
३६. श्री केशव बाबू चुटहा [मुजफ्फरपुर]
३७. श्री जयकृष्ण मिश्र ग्राम पढ़री-गणेशपुर [उत्तर प्रदेश]

नवम खण्ड

हमारे चरित्रनायक की जीवन-लीला अवधि के अन्तिम वर्षों की कतिपय उल्लेखनीय महत्व सूचक बातें २१८–२३४

दसम खण्ड

महाप्रयाण मुहूर्त एवं उपसंहार २३५–२४२

प्रथम खण्ड

लेखक की ओर से प्राक्कथन तथा आभार-प्रदर्शन

हमारे चरित्रनायक की जीवनी लिखने का प्रयास सर्व प्रथम १९६८ ई० में ही आरम्भ हुआ और यह प्रयास उनके शरीर छोड़ने के पूर्व जारी रहा। सीवान के वकील श्री कपिलदेव नारायण सिंह तथा श्री परमानन्द शरण (नून्नू बाबू) ने, जिनमें दोनों ही हमारे चरित्रनायक के कृपापात्र हैं, बहुत ही अनुनय-विनय के साथ उनसे पूछ-ताछ कर आरम्भिक काल से ही जीवन की घटनाओं को एक छोटी पञ्जी में लेखबद्ध कर लिया। भक्तवर श्री रामाजी की पूर्व में छपी हुई जीवनी को हमारे चरित्रनायक ने कई दृष्टिकोण से अधूरी पाया। अतएव, एक दूसरी बड़ी पञ्जी में उन्होंने श्री भगत जी के जीवन की पूरी घटनाओं को श्री कपिलदेव बाबू से ही इसलिये लिखवा दिया कि आगे चलकर भक्त जी की एक पूरी जीवनी छप जाय। ये दोनों पञ्जियाँ एक ही सज्जन के पास एक ही गट्ठर में हमारे चरित्रनायक के शरीरान्त हो जाने के उप-रान्त रख दी गयी थीं पर, कुछ महीनों के बाद जब जीवन-चरित्र तैयार करने का प्रश्न खड़ा हुआ तब उस गट्ठर से केवल श्री रामाजी की ही जीवन-घटनाओं वाली पञ्जिका मिल पायी। बहुत खोज करने पर भी हमारे चरित्रनायक के जीवन सम्बन्धी घटनाओं वाली पञ्जिका नहीं मिल पायी और गायब हो गयी। यह तो सर्वविदित है कि हमारे चरित्रनायक ने अपनी जीवन-लीला अपने को बहुत ही छिपा कर की। जीवन-काल में ही वे अपने को छिपाकर रखना पसन्द करते थे, और अपने जीवन-चरित्र छपने के विरोध में पाये गये थे। अतएव, हठ पूर्वक किया गया प्रयास कैसे सफल होता ? सारे शिष्य-मण्डल एवं उनके प्रेमियों की राय यह हुई कि उनका जीवन-चरित्र अवश्य छापा जाय। पर, यह प्रश्न उठा खड़ा हुआ कि जीवन-चरित्र का आधार क्या हो ? जब तक उनके जीवन सम्बन्धी तथ्यों को उनके समकालीन अथवा उनसे बड़े महापुरुषों से, जो उनके परिवार, ग्राम या मित्र-मण्डली में जीवित हों, संग्रह न कर लिया जाय, तब-तक जीवन-चरित्र लिखने का श्री गणेश भी नहीं किया जा सकता। ऐसी परिस्थिति में ही लेखक के मत्थे जीवन-चरित्र लिखने का भार दिया गया। एक ओर तो लेखक को अपने जीवन में कभी कोई पुस्तक पुस्तिका लिखने का अवसर ही नहीं मिला और न इस प्रकार लेखन-क्षमता ही अपने में मालूम पड़ी, दूसरी ओर, तथ्यों का संग्रह कर जीवन-चरित्र को निर्माण करना, और सबसे प्रधान तीसरी बात यह कि जिनका जीवन-चरित्र लिखा जाय वही इसके विरोध में हों, इन परिस्थितियों में तो हिम्मत ही टूट गयी, पर वर्त-मान महाराज जी, श्री अनन्त वैजनाथ शरण जी ने यह कहते हुए उत्साह बढ़ाया कि स्वयं श्री सिया स्वामिनी जू हमारे चरित्रनायक के जीवन-चरित्र लिखे जाने के पक्ष में हैं। तब, श्री किशोरी जी के ही कृपा-वलंब के सहारे लेखक ने उनके जीवन सम्बन्धी तथ्यों का संग्रह कई महीनों तक किया कराया। इस कार्य के सम्पादन में चरित्रनायक की जन्मभूमि जाकर उनके परिवार, ग्राम तथा मित्रमण्डल से सम्पर्क किया और जो कुछ भी उपलब्ध हो सका उसका संग्रह किया गया। कुछ प्रेमियों ने भी उनके जीवन सम्बन्धी बातें बतलायीं तथा श्री अवध के भी गण्य-माण्य सन्तों से प्रभाव सूचक बातें प्राप्त हुई।

भौतिक क्षेत्र में जिनका जीवन इतिहास बनता है, उनके सम्बन्ध में बहुत-सी बातें तो उनके ही लिखित दैनिकचर्या-पञ्जी, देश के अखबारों के लेख तथा मित्रों के अनुभव से प्राप्त हो जाती हैं। पर यहाँ तो एक महान सन्त की जीवनी का ढङ्ग-ढांचा भौतिक क्षेत्र से सर्वथा भिन्न प्रतीत हुआ। विशेष कर हमारे

चरित्रनायक जैसा महान सन्त का तो तरीका ही निराला था। यहाँ तो न कोई लिखित दैनन्दिनी और न कोई आन्तरिक रहस्य के ज्ञाता ही उपलब्ध हुए। महा सन्त की असली जीवनी क्या है ? ऐसे सन्त के सम्बन्ध में केवल यह कहना कि वे अमुक स्थान में पैदा हुए, अमुक-अमुक क्षेत्र में जाते रहे और उनके शिष्य एवं प्रेमियों की संख्या अमुक है, उनका वास्तविक जीवन-चरित्र नहीं कहा जा सकता। उनके द्वारा प्रेरित एवं प्रकाशित भक्ति-साधना में किनको क्या अनुभूति हुई, उनका प्रभाव कितने लोगों के हृदय पर छा गया और उनके आन्तरिक रहस्य क्या थे तथा उनके दैनिक जीवन में कौन से ईश्वरीय दिव्य आचरण प्रगट हुए, आदि विवरणों को समुचित रूप से प्रकाश में लाने से ही सन्त के अनुरूप जीवन-चरित्र का निर्माण हो सकता है और ऐसे ही जीवन-चरित्र के पठन-पाठन से भक्ति साधना में लगे हुए पाठकों को कुछ प्रकाश भी मिल सकता है। हमारे चरित्रनायक के इन आन्तरिक रहस्यों एवं उनके शिष्य मण्डल पर जो उनके प्रभाव अलग-अलग पड़े अथवा शिष्यों को अपने जीवन में जो अनुभूतियाँ हुईं या चमत्कार दर्शन हुए, इन सब तथ्यों के संग्रह में भी लेखक को निराशा ही हुई है। कहा जाता है कि हमारे चरित्र-नायक के शिष्य मण्डल की संख्या पचास हजार से भी अधिक है, पर जिन लोगों से कुछ उद्गार प्राप्त हो सके हैं, ऐसे शिष्यों की संख्या पचास से भी कम है। अतएव, उनके जीवन-काल में जो कल्याणकारी या रहस्यभरी बातें प्रकट हुईं उसका शतांश भी लेखक को प्राप्त नहीं हो सका। फलस्वरूप, जो जीवन-चरित्र तैयार किया जा रहा है वह तो उपरोक्त कारणों से अधूरा की कहा जायेगा। हमारे चरित्रनायक के जीवन काल में यदि किसी शिष्य को कुछ अनोखी घटना का अनुभव हुआ तो उस घटना का जिक्र किसी दूसरे के पास हमारे चरित्रनायक के कड़े अनुशासन या भय से नहीं हो पाया। पर उनके देहावसान के बाद भी जिन लोगों ने उनके सम्बन्ध की जीवन-अनुभूतियों को आज भी छिपाये रखना उचित समझा है यह तो पूर्ण जीवन-चरित्र के प्रकाशन में सहायक नहीं हुआ। तो भी, जो कुछ तथ्य प्राप्त हो सके हैं वे कम महत्वकारी नहीं हैं और बीज रूप से इन्हीं थोड़े विवरणों से पाठकों को पता चल जायेगा कि हमारे चरित्र-नायक के सन्त एवं भक्ति-लीला का आचरण किस कोटि का रहा और आज भी उन आचरणों के अनुकरण से हम लोगों के जीवन में क्या लाभ हो सकता है।

प्राप्त तथ्यों तथा लेखक की निजी अनुभूति से जो कुछ प्रकाश मिल पाया है उसके आधार पर हमारे चरित्रनायक की उपासना सम्बन्धी मूल-भूत सिद्धान्तों एवं उनकी रहस्यमयी लीलाओं के सम्बन्ध में कुछ विवरण आने वाले पृष्ठों में उल्लेखित किये जा रहे हैं। यही सही है कि हमारे चरित्रनायक के सदृश महान प्रेमाभक्ति के अवतार की जीवन लीलाओं को प्रकाशित करने का यह प्रयास सूर्य को दीपक दिखाने के जैसा ही है। पर, सन्तोष इस बात का है कि, है तो यह संत महिमा का गान ही जिसके गान करने में—

विधि हरिहर कवि कोविद बानी। कहत साधु महिमा सकुचानी॥

तो लेखक को भी बरबस अपने लिये यही कहना पड़ता है—

सो मोसन कहि जात न कैसे। साक वनिक मनि गुनगन जैसे॥

लेखक तो हमारे चरित्रनायक का ही एक कृपापात्र बालक है। येन-केन प्रकारेण गुरुदेव का यश-गान करना तो उसका परम सौभाग्य है और वह भी उन्हीं से प्रकाश पाकर। किन्तु, तो भी अपनी त्रुटियों को देखते हुए पाठक सन्त, महात्मा एवं प्रेमियों से करबद्ध प्रार्थना है कि त्रुटियों की ओर ध्यान न देते हुए सुधार कर ही वे जीवन-चरित्र का पठन-पाठ करेंगे।

जैसा कि पूर्व कण्डिकाओं में उल्लेखित किया जा चुका है, यदि अनेकानेक प्रेमी, शिष्य एवं श्री अवध के पूज्य सन्त महात्मा हमारे चरित्रनायक के जीवन-सम्बन्धी घटनाओं एवं तथ्यों पर लिखित रूप

से प्रकाश डालने की कृपा न करते तो जीवनचरित्र का निर्माण ही न हो पाता और न मुझे लेखक कहाने का ही सौभाग्य प्राप्त होता। मैंने तो इन सभी सूत्रों से प्राप्त तथ्यों को यथामति व्यवस्थित रूप से क्रमबद्ध सजाने का प्रयास मात्र का किया है। विस्तारभय से ऐसा करने में कतिपय प्राप्त लेखों के कुछ अंश को हटाना पड़ा है अथवा भाषा में कुछ हेर-फेर करना पड़ा है, परन्तु यथाशक्ति मैंने सच्चे हृदय से यह चेष्टा की है कि लेखकों के भाव अक्षुण्ण बने रहे ऐसा करने में भी जो कुछ त्रुटि मुझसे हो गयी हो तो मैं उन सभी सन्त महात्मा एवं शिष्यों से क्षमा याचना करता हूँ।

कृतज्ञता प्रकाश

श्री अवध के सन्त महात्मा, हमारे चरित्रनायक के अन्य प्रेमी तथा शिष्य वर्ग से उनके जीवन सम्बन्धी तथ्यों को संग्रह करने कराने तथा तत्सम्बन्धी लिखित लेख प्राप्त करने में हमारे भाई परमनन्द शरण (नून्नू बाबू) ने आरम्भ से ही अथक परिश्रम किया है। श्री सीता वल्लभ शरण जी महाराज ने हमारे चरित्रनायक के श्री अवध-वास के आरम्भिक काल की जीवन घटनाओं तथा उनकी जीवन-चर्या पर समुचित प्रकाश डालकर जीवन-चरित्र निर्माण में अमूल्य सहयोग प्रदान किया है।

उपरोक्त दोनों सज्जनों के प्रति मैं हार्दिक आभार ज्ञापन करता हूँ।

इसके अतिरिक्त श्री अवध के सभी गण्यमाण्य सन्तों का परम ऋणी हूँ जिन्होंने लिखित रूप से हमारे चरित्रनायक के जीवन सम्बन्धी घटनाओं एवं रहस्यों को प्रकाश में लाकर चरित्रनायक के आश्रित समस्त विवहुती भवन परिवार का मार्ग प्रदर्शन किया है और जीवन-चरित को पुस्तकाकार होने में अमूल्य योगदान दिया है अतएव, मैं सबों के प्रति हार्दिक कृतज्ञता-प्रकाश, अपनी ओर से तथा समस्त श्री विवहुती भवन परिवार की ओर से, करता हूँ। श्री अवध के जिन महान सन्तों के लेख प्राप्त हुए हैं, क्रमशः उनके शुभ नाम हैं :—

(१) अनन्त श्री विभूषित श्री गंगादास जी महाराज, छोटा छत्ता मठ, पुरी।
(२) ,, ,, श्री लक्ष्मण किलाधीश स्वामी सीताराम शरण जी महाराज।
(३) ,, ,, श्री भक्तमाली मैथिली शरण जी महाराज।
(४) ,, ,, श्री नृत्य गोपाल दास जी महाराज।
(५) ,, ,, श्री पण्डित अखिलेश्वर दास जी महाराज।
(६) ,, ,, श्री सियाराम दास जी महाराज (श्री जानकी घाट)
(७) ,, ,, श्री ब्रह्मचारी विश्वनाथ जी महाराज।
(८) ,, ,, श्री रामायणी लक्ष्मण दास जी व्यास।
(९) ,, ,, श्रीमती सीया सहचरी जी, श्री रूपकला घाट।
(१०) ,, ,, श्री महान्त वैदेही शरण जी महाराज, हनुमत-निवास।
(११) ,, ,, श्री बालयोगी लाल भैया।
(१२) ,, ,, श्री ब्रह्मचारी श्री वासुदेवाचार्य।
(१३) ,, ,, श्री जानकी शरण जी, श्री बधाई भवन।
(१४) ,, ,, श्री रामायणी श्री पुरुषोत्तम दास जी, श्री हनुमान बाग।
(१५) ,, ,, श्री लक्ष्मण शरण जी, पुराना हनुमत् सदन।
(१६) ,, ,, श्री राम प्रताप दास शास्त्री, बड़ी छावनी।
(१७) ,, ,, श्री रामाश्रय दास जी चौगुरुजी।

(१८) " " श्री सीता शरण जी, श्री चारुशीला बाग।
(१९) " " श्री स्वामी श्री मधुसूदनाचार्य जी श्री अशर्फी भवन, अयोध्या।
(२०) " " श्री अनन्त हरिनाम दास जी वेदान्ती, जानकी घाट।
(२१) " " श्री अनन्त कौशल किशोर शरण जी महाराज, हनुमत सदन।
(२२) " " श्री अनन्त स्वामी ब्रह्मानंदाचार्य वेदान्त दर्शन आश्रम स्वर्गद्वार अयोध्या

हमारे चरित्रनायक के अनेकानेक प्रेमियों में श्री अवध के श्री कौशल किशोर मिश्र 'पुरोहित' म्युनिसिपल कमिश्नर, फैजाबाद, श्री अवधेश कुमार दास 'शास्त्री मन्त्री, स्वामी श्री भगवताचार्य स्मारक सदन समिति, अयोध्या, तथा गया के अपर जिला मजिस्ट्रेट देवीशरण सिंह के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं, जिन्होंने अपनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हुए हमारे चरिनायक के महत्वसूचक कई दिव्य गुणों का उल्लेख कर हम सबों का उत्साहवर्द्धन किया है।

सारे विवहुती भवन परिवार के लिये सचमुच यह बड़ी ही उल्लासमयी और उत्साहवर्धिनी कृपा है जिसे श्री तीर्थराज प्रयाग तटवासी दिव्य प्रकाश पुञ्जमय तथा भक्ति-प्रेरणा श्रोत अनन्त श्री प्रभुदत्त ब्रह्मचारी जी महाराज ने जीवन चरित्र-भूमिका लिखकर दर्शायी है। श्री ब्रह्मचारी जी महाराज द्वारा अनायास इस कृपा के लिये हम सब उनके बड़े ही अनुगृहीत होते हैं।आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि आपके भूमिका लेख से जीवन-चरित्र में चार चाँद लग गये हैं।

श्री सिया स्वामिनी जू से अन्त में यह प्रार्थना है कि उनके एक नित्य पार्षद की जो भक्तिपूर्ण जीवन-गाथा श्री स्वामिनी जू की कृपा से ही एक ग्रन्थरूप में साकार हो पायी है प्रेमोपासना में संलग्न सभी भक्तों एवं प्रेमियों के लिये हृदयग्राही बने तथा उनका मार्ग-प्रदर्शन करने में सामर्थ हो। जीवन चरित्र पाठकों से भी प्रार्थना है कि यदि यह जीवन-चरित्र उनके हृदय को जाँच जाय और अधिक पुस्तकों की माँग हुई तो हम सब जीवन-चरित्र का दूसरा संस्करण भी छपवाने का प्रयास करेंगे। जीवन-चरित्र अवलोकन के बाद यदि किन्हीं त्रुटियों के सुधार के लिये लिखित सुझाव पाठकों से प्राप्त होगा तो सुझाव के अनुसार दूसरे संस्करण में संशोधन एवं परिवर्द्धन भी किया जायगा। आशा है कि पाठक हमारी प्रार्थना पर अवश्य ध्यान देकर हमारा उत्साहवर्द्धन करेंगे।

जिस समय जीवन-चरित्र के प्रारम्भिक अध्यायों का प्रारूप तैयार किया जा रहा था, उस अवसर पर हमारे वर्तमान महाराज जी अनन्त श्री बैजनाथ शरण जी महाराज, आदरणीय भाई श्री रङ्गलाल चौधरी, एडवोकेट, धनबाद, श्री रामदेनी शर्मा, एडवोकेट, हाजीपुर तथा श्री परमानन्द शरण (नून्‌नू बाबू) ने सम्मिलित रूप से प्रारूप के पृष्ठों का अध्ययन एवं अवलोकन किया और समुचित सुझाव देकर मेरा मार्ग-प्रदर्शन किया। इससे हमें जीवन-चरित्र लेख में बहुत ही बल प्राप्त हुआ और पथ-निर्देश भी हुआ यह तो वर्तमान श्री महाराज जी की ही कृपा एवं प्रेरणा का फल है कि यह जीवन-चरित्र का लेख जो रामनवमी सन् १९७३ ई० में आरम्भ हुआ लगातार प्रगति की ही और चलता रहा। मैं उपरोक्त सभी सज्जनों के प्रति अपना हार्दिक आभार प्रगट करता हूँ।

पाठकों की सुविधा के लिये जीवन-चरित्र दश खण्डों में बाँट दिया गया है और सभी खंडों की विषय सूची अनुक्रमिका तैयार कर प्रसंगानुकूल ही श्रेणी बद्ध कर दी गयी है। किसी भी प्रसंग को अनुक्रमिका के आधार पर तत्काल खोज कर अवलोकन किया जा सकता है।

जीवन-चरित्र को लेखबद्ध करने की क्रिया में आदरणीय भाई गुरुशरण लाल जो पटना के पारिवारिक एवं शारीरिक प्रतिकूलताओं के होते हुये भी लगातार पन्द्रह-बीस दिनों तक बैठ-बैठकर जीवन-

चरित्र-प्रारूप को स्वच्छ सुन्दर अक्षरों में लेख बद्ध कर मेरी पूरी सहायता की है। श्री महाराजजी की कृपा तो इन पर है ही, उन्हीं से प्रेरित एवं प्रकाशित होकर इनके दैनिक जीवन चलते हैं। उनके इस सक्रिय सहयोग के लिये उन्हें मैं धन्यवाद क्या दूँ, एकमात्र श्री महाराज जी से प्रार्थना है कि युगलचरण कमल में इनकी प्रीति नित्य नूतनता का लाभ करे।

अन्त में उन एक सज्जन के प्रति अपनी-अपनी कृतज्ञता मैं प्रकाश करता हूँ, जिन्होंने किसी भी प्रकार से जीवन-चरित्र के निर्माण में मुझे आशीर्वाद एवं सहयोग दिया है।

इति शुभम्

विनीत—

रामयत्न शरण
निवास, ग्राम—अखौरा खाप
पो०—पोलडीह, जपला
जिला—पलामू
बिहार

हमारे परम प्रेमास्पद श्री पुजारीजी महाराज

[भूमिका]

यद् यद् विभूतिमत्सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेव वा।
तत्तदेवावगच्छ त्वं मम तेजोंऽशसंभवम् ॥*

(श्री० भग० गी० १० अ० ४१ श्लो०)

छप्पय

समुझो मेरी बात सार को सार सुनाऊँ।
सबको जो गुरु मन्त्र ताहि फिरितैं बतलाऊँ॥
जिनिकूँ देखो अति विभूतियुत पावन प्रानी।
सब ऐश्वर्य समेत कान्तियुत मनहर बानी॥
शक्तियुक्त अति शौर्ययुत, तुम्हें जगत में जो दिखत।
तेज अंश अभिव्यक्त मम, विज्ञ रूप तिनि मम लखत॥

आहार, निद्रा, मरणभय, और मैथुन ये चार बातें पशुओं में मनुष्यों में समान ही हैं। सभी प्राणी अपनी प्रकृति के अनुसार आहार करते ही हैं, सभी किसी-न-किसी प्रकार थोड़ी निद्रा लेते हैं। सभी को जीवन का भय है। जीते रहने का सभी प्रयत्न करते हैं, स्त्री-पुरुष का मिथुन होना–विषय-सुख–सन्तानोत्पत्ति सभी योनि के जीव करते हैं। इन्हें जैवधर्म कहते हैं। जीवमात्र की इन कर्मों में अनायास स्वाभाविकी रुचि होती हैं, ये बातें सिखायी पढ़ायी नहीं जातीं।

चौरासी लाख योनि के जीवों में से मनुष्य ही ऐसा है, जिसकी धर्म में रुचि होती है। पुरुष धर्म से हीन है–अधार्मिक है–उसमें और पशुओं में कोई अन्तर नहीं। धर्महीन पुरुष तो "साक्षात् पशुः पुच्छ विषाण" हीन! हैं उनके सींग और पूछ नहीं हैं ऐसे पशु हैं। वे घास-भूसा न खाकर अन्न खाते हैं, तो बहुत से धनिकों के भाग्यशाली कुत्ते भी तो दूध जलेबी आदि खाते हैं। मानवता तो धार्मिकता में ही है भगवत् भक्ति में ही है भक्तिहीन नर दो पैर के पशु ही हैं।

राजर्षि भर्तृहरि ने चार प्रकार के पुरुष बताये हैं—

एके सत्पुरुषाः परार्थघटकाः स्वार्थान् परित्यज्य ये।
सामान्यास्तु परार्थमुद्यमभृतः स्वार्थाविरोधेन ये॥
तेऽमी मानव राक्षसाः परहितं स्वार्थाय निघ्नन्ति ये।
ये निघ्नन्ति निरर्थकं परहितं ते के न जानीमहे॥

---

* श्रीकृष्ण भगवान् अर्जुन से कह रहे हैं—हे अर्जुन! तुम इतना ही समझो जो-जो भी विभूतिवान्, श्रीमान् शक्तियुक्त वस्तुएँ हैं, वे सब मेरे ही तेज अंश से सम्भव हैं।

१—सत्पुरुष—जिनका अपना कोई स्वार्थ ही नहीं सदा परोपकार में ही निरत रहते हैं।
२—सामान्य पुरुष—जो परोपकार तो करते हैं, किन्तु अपने स्वार्थ की रक्षा करते हुए करते हैं।
३—राक्षसपुरुष—जो अपने स्वार्थ की रक्षा के लिये दूसरों के हित की हानि करते हैं।
४—महानीच पुरुष—जो अकारण, बिना अपने स्वार्थ के भी दूसरों को हानि पहुँचाते हैं।

इसका अनुवाद हमने छप्पय छन्द में यों किया है—

छप्पय

एक होहिँ सत् पुरुष स्वार्थ आपनो तजि डारें।
परहित में नित निरत न अपनो लाभ बिचारें॥
दूसर हैं सामान्य स्वार्थ रखें परहित करि।
तीसर राक्षस स्वार्थ हेतु अपकार करैं पर॥
बिना बात जो व्यरथ में, काज बिगारत नित्य हीं।
वे नर कितने पातकी, तिनकी कछु गणना नहीं॥

इन चार प्रकार के मनुष्ययों के अतिरिक्त एक पाँचवें प्रकार के भी मनुष्य होते हैं, उनका नाम है अनुग्रह सृष्टि के मानव। वे प्रारब्ध कर्मों के भोग के लिये नहीं, अपितु जीवों पर अनुग्रह करने के निमित्त भगवद् आज्ञा से से अवनि पर अवतरित होते हैं और सदा जीवों के कल्याण करने में ही लगे रहते हैं। हमारे पुजारीजी उन्हीं भगवत् कृपापात्र अनुग्रह सृष्टि के मानवों में से थे।

यह सम्भवतया सन् १९२२ के लगभग की बात है मेरे कुछ स्वजनों ने कहा—बिहार में द्विजाति के लोग खेती तो करते हैं, किन्तु हल की मूँठ को नहीं छूते। आगे-आगे बैलों को पकड़कर तो चलेंगे किन्तु हल की मूँठ को न पकड़ेंगे। इससे लोगों को बड़ा कष्ट है हलवाहे मिलते नहीं, स्वयं हल की मूँठ छू नहीं सकते इससे बहुत से खेत बिना जोते रह जाते हैं। आप चलकर जनता को समझावें कि खेती करने वाले को हल चलाना पाप नहीं।

इधर ब्रजमण्डल के खेती करने वाले सभी ब्राह्मण अपने हाथ से हल जोतते हैं। इसमें किसी प्रकार का पाप नहीं माना जाता। उस समय मुझमें सामाजिक सुधार के लिये बड़ा उत्साह था मैं द्विजाति में हल प्रचार करने छपरा जिले में गया। बनियापुर से गौरिया कोठी जा रहे थे। मार्ग में सन्त रामाजी महाराज की मण्डली मिली। स्वयं रामाजी महाराज एक इक्का में पीले वस्त्र धारण किये बैठे थे उनके साथ दश-बीस और भी भक्त थे। मेरे साथ एक कांग्रेसी विचार के सज्जन थे। उन्होंने कहा—देखिये, यह जनखों की मण्डली है। गाँव-गाँव में ये रात्रिरात्रि भर अखण्ड कीर्तन करते हैं गाते हैं नाचते हैं मूर्ख जनता को ठगते हैं।'

तब तक मैंने श्री रामाजी महाराज की महिमा नहीं सुनी थी। जब उनका देहावसान हो गया और हमारे परम प्रेमास्पद परमहंस श्री राघवदास जी महाराज ने श्री रामाजी के नाम से रामायण परीक्षा समिति की स्थापना की, जिसका कार्यालय पहिले उनके आश्रम बरहज ही था पीछे से गीता प्रेस गोरख-पुर में आ गया। तब मुझे श्री रामाजी की महिमा का परिचय प्राप्त हुआ।

श्री रामाजी के इष्ट दूल्हा राम थे। वे रामायण में विवाह तक ही प्रकरण पढ़ते। उनके राम सीता विवाह करके जनकपुरी में ही घर जमाई बन कर रह गये। उनके राम न कभी बन में गये न कभी

जी का परित्याग ही हुआ। प्रिया-प्रीतम—दूल्हा-दुलहिन—सदा जनकपुर में ही विराजते हैं। उनकी साली-सरहजें उन्हें नित्य लाड़-लड़ाती रहती हैं, वे अपने को श्री रामजी की साली मानकर उन्हें भाँति-भाँति की मीठी-मीठी गालियों से ही रिझाते रहते थे।

उनका इष्ट विवाह प्रकरण ही था। उनके राम सदा 'नौसे वबुआ' ही बने रहते। उनके माथे पर सदा विवाह का मौर और श्री किशोरी जी के माथे पर विवाह की चन्द्रिका रखी रहती। उनकी सर्व-प्रिय लीला विवाह लीला ही थी।

वे किसी भी जाति के दूल्हा को देखते उसके पीछे लगते, उसमें अपने इष्ट का रूप मानकर—भगवत् बुद्धि से—उसकी तब तक सेवा करते रहते जब तक विवाह सम्पन्न हो। कैसी मधुर उपासना है, कैसी सरस भावना है।

उन्हीं सन्त रामाजी महाराज के उत्तराधिकारी शिष्य हमारे पुजारी जी महाराज थे। इन्होंने विवाह लीला का सर्वत्र प्रचार-प्रसार किया। पहिले ये अवध में ठठेरा मन्दिर में पुजारी थे। वहाँ भी सीताराम के स्वरूप रखते और उनकी दिव्य झाँकियाँ कराते। इनकी विशेष ख्याति श्री सिद्ध किशोरी जी के कारण हुई। ये श्री किशोरी जी का स्वरूप बनते थे। इनका सौन्दर्य माधुर्य परम दिव्य था। ठठेरा मन्दिर के विवहुती भवन में हमने सिद्ध किशोरी जी के दर्शन किये थे। प्रथम दर्शन में ही उन्होंने हमारे ऊपर प्रम अनुग्रह की और अपने कर कमलों से हमें प्रसादी वस्त्र भेंट किया। जब हम नैपाल से पशुपति-नाथ जी के दर्शन करके लौट रहे थे तब सीतामढ़ी में भी पुजारी जी के साथ दिव्य किशोरी जी के दर्शन हुए। उस समय उन्होंने हमें स्नेह में सराबोर कर दिया। हम साथ-ही-साथ रेल में लौटे थे। पीछे मैंने सुना दिव्य किशोरी जी अपने परम धाम में पधार गयीं।

पुजारीजी के उन्हीं के कारण सहस्रों बड़े-बड़े व्यक्ति शिष्य हुए। बिहार विधान सभा के अध्यक्ष बाबू रामदयालु सिंह जी भी दिव्य किशोरी जी के कृपा पात्र थे, उन्हीं की आज्ञा से उन्होंने पुजारी जी से दीक्षा ली। फिर तो पुजारी का अपना ही एक नवीन विवहुती भवन बन गया। वे स्थान-स्थन पर विवाह लीला कराते। आरम्भ में तो वे श्री सीता और श्री रामजी के दो ही स्वरूप रखते थे। पीछे से चारों भाइयों और चारों दुलहिनों के स्वरूप रखने लगे।

एक बार हमारे झूसी संकीर्तन भवन में भी उन्होंने कृपा करके विवाह लीला करायी एक महीने से अधिक वे आश्रम में विराजे। हमने बहुत ही ठाठ-बाठ से समारोह पूर्वक श्री रघवेन्दु सरकार की बारात निकाली और जैसा विधान उन्होंने बताया उसी प्रकार विवाह लीला की। वे यहाँ रहकर अत्यन्त ही प्रसन्न हुए। जब भी मिलते तभी कहते—झूसी में जैसी विवाह लीला हुई वैसी कहीं नहीं हुई। झूसी संकीर्तन भवन में जैसा आनन्द हमें मिला वैसा कहीं नहीं मिला। उन दिनों हमारे वर्तमान श्री महन्त श्री बैजनाथ शरण जी महाराज बालक थे और स्वरूप बनते थे। हमारे पुजारी जी के वे भानजे लगते। हमसे बड़ा स्नेह रखते। तभी हमने श्री पुजारी जी को अपनी लिखी भागवती कथा भेंट की। उसकी वे विवहुती भवन में नित्य नियम से कथा करते। जीवन भर उनका नियम चालू रहा। जो भी नये खण्ड छपते वे तुरन्त आदमी भेजकर मँगा लेते। इस क्रम को हमरे वर्तमान महन्त श्री बैजनाथ शरण जी महाराज ने भी चालू रखा है। भागवती कथा के अभी तक १०९ खण्ड छप चुके हैं। अब भी विवहुती भवन में उसकी नित्य नियम से कथा होती है। जैसा प्रेम स्नेह श्री पुजारी जी हम पर रखते थे वैसा ही स्नेह हमारे बैज-नाथ शरण जी भी रखते हैं। महन्त होने पर उनके स्नेह भाव में किसी भी प्रकार का परिवर्तन नहीं हुआ वे अपने आत्मीय ही हैं।

आज श्री पुजारी जी पार्थिव शरीर से नहीं रहे। किन्तु उनकी अमल विमल धवल उज्ज्वल कीर्ति तो सर्वत्र व्याप्त ही है। यह हमारा सौभाग्य ही है, कि उनके इस जीवन चरितामृत को छपाने का सौभाग्य हमारे भागवत प्रेस को हुआ। श्री पुजारीजी परम सन्त थे, उनके सम्बन्ध में जितना भी लिखा जाय उतना ही थोड़ा है, पाठक इस पुस्तक में उनके सम्बन्ध की कुछ लीलायें पढ़ेंगे ही ऐसे ही सन्तों के सम्बन्ध में राजर्षि भर्तृहरि ने कहा है—

मनसि वचसि काये पुण्यपीयूषपूर्णा—
स्त्रिभुवनमुपकारश्रेणिभिः प्रीणयन्तः।
परगुणपरमाणून्पर्वतीकृत्य नित्यम्
निजहृदि विकसन्तः सन्ति सन्तः कियन्तः॥

छप्पय

जिनके तन मन पुन्य प्रेम अम्मृत तैं पूरित।
बानी अति ई मधुर हिये कूँ हरषि हिलोरत॥
मुदित करत जग फिरत न परअवगुन कूँ निरखत।
परगुन अनुके सरिस ताहि गिरि करि हिय बिकसत॥
सदा मुदित मन त्यागि मद, सबके नित गुन गहत हैं।
कितने ऐसे सन्त हैं, जो परहित दुख सहत हैं॥

संकीर्तन भवन, प्रतिष्ठानपुर
भूसी (प्रयाग)
कार्तिक शुक्ला १२ सं० २०३१ वि०

विनीत—
प्रभुदत्त ब्रह्मचारी

सन्त सम्मति माला तथा प्रेमियों के प्रेम उद्गार

आदरणीय पुजारी श्री रामशङ्कर शरण जी महाराज, अयोध्या की जीवन-चर्या

(लेखक—श्री अनन्त महान्त गङ्गादासजी महाराज, छोटा छत्ता मठ, पुरी वाले)

श्री पुजारी जी, अर्थात् श्री रामशङ्कर शरणजी महाराज, श्री विवहुति भवन, अयोध्या में निवास करते हुए श्री सीताराम युगल लीला स्वरूप माधुर्य रस के अनन्य उपासक आजीवन बने रहे। श्रीरामभद्र जू के प्रति जैसा कि श्री रामायण जी में कहा गया है:—

"चिदानन्दमय देह तुम्हारी, विगत विकार जान अधिकारी।"

श्री पुजारी जी महाराज में इस चौपाई के भाव पूर्णरूपेण लागू थे। आप इसके परम जानकार एवं अधिकारी थे। भाव प्रधान उपासना तथा भाववश्य भगवान् कहे जाते हैं यथाः—

प्रतिमा-तीर्थ-मन्त्रेषु भैषजे वैष्णवे गुरौ।
यादृशी भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशी॥ पुनः
न काष्टे विद्धते देवो न पाषाणे न मृण्मये।
भावे ही विद्धते देवः तस्मात् भावो हि कारणम्॥

आपका लीला बिहारी युगल स्वरूप में अनन्य भाव था। अतएव उनके उपासना जीवन में उपरोक्त श्लोकों के भाव पूरे-के-पूरे घटित हुए।

माधुर्यभाव में श्री मिथिला धाम-विवाह-लीला की ही प्रधानता है। अतः, आप चैत्र, वैशाख और ज्येष्ठ मास छोड़कर शेष नव महीनों की प्रत्येक पञ्चमी को विवाह-उत्सव बड़े धूम-धाम से मनाते थे और उसी लीला में युगल लीला विहारी की रूप-माधुरी में विभोर रहा करते थे। आपकी सर्वकालीन यही परिचर्या थी। श्री युगल विहारी सरकार से सदा लाड़ लड़ाया करते थे। उसी में परमानन्द सुख की अनुभूति करते हुए उन्होंने तत्सुख में सुखपूर्वक जीवन व्यतीत किया—

"सगुण उपासक, परम हित, निरत नीति दृढ़ नेम"

यह गुण आपमें परिपूर्ण था। जो विवाह लीला सदा गाते सुनते हैं, उनमें सदा ही आनन्द उछाह बना रहता है यथा—

श्री रघुवीर विवाह जे सप्रेम गावहिँ सुनहि।
तिन कहँ सदा उछाह मङ्गलायतन राम यश॥

जिस प्रकार परातपर भगवान् का पञ्चव्यूह संकर्षण, प्रद्युम्न आदि को कहा जाता है तैसे ही भक्तों के लिये श्री गुरुदेव के द्वारा तथोत्तर पञ्च परमेश्वर परमात्मा की प्राप्ति करायी जाती है।

प्रथम परमेश्वर तो श्री गुरुजी ही हैं, यथाः—

सर्व तीर्थाश्रयश्चैव सर्वदेव समाश्रयः।
सर्व वेदस्वरूपी च गुरुः साक्षात् हरिः स्वयम्॥

पुनश्च, न गुरोश्च प्रियो धर्मः न गुरोश्च प्रियं तपः ।
न गुरोश्च प्रियं सत्यं न पुण्यश्च गुरोः परम् ॥

अर्थात् गुरु ही परमेश्वर हैं ।

दूसरा परमेश्वर निर्गुण, निराकार श्री शालग्राम शिला हैं, यथा—

"अगुण, अखण्ड अनन्त अनादि, जेहि चिन्तहिँ परमारथ वादी ।" तथा

"बिनु पग चले सुने बिनु काना, कर बिनु कर्म करै विधि नाना ॥" इत्यादि

श्री शालग्राम शिला निर्गुण परात्पर ब्रह्म परमेश्वर हैं, यथा—

"निर्गुण रूप सुगम अति, सगुन न जाने कोय ।"

पुनः तीसरा परमेश्वर सगुण-निर्गुण मिश्रण अर्चा विग्रह हैं । हाथ, पाव, आँख, कान, मुखारविंद सब सगुण हैं, परन्तु व्यवहार से निर्गुण हैं, यथा—

रामो न गच्छति न तिष्ठति नानुशोचत्याकांक्षते ।
त्यजति नो न करोति किञ्चित ॥
आनन्दमूर्त्तिरचलः परिणाम हीनाः ।
मायागुणान् नुतोहि तथा विभति ॥

अर्थात् श्रीराम न चलते हैं, न ठहरते हैं न त्यागते हैं और न कोई क्रिया ही करते हैं । श्रीराम जी तो आनन्दस्वरूप, अविचल और परिणामहीन हैं । केवल माया गुणों से व्याप्त होने के कारण ही ऐसे प्रतीत होते हैं–सगुण–निर्गुण मिश्रण हैं ।

पुनः, चौथा परमेश्वर श्री लीला विहारी युगल सरकार श्री सीताराम हैं, यथा—

"बाल विनोद करत रघुराई । विचरत अजिर जननि सुखदाई ॥ इत्यादि

बाल लीला सगुण तथा "प्राकृत शिशु इव लीला" मनुष्यवत् हँसना, रोना, खाना, सोना, बोलना चलना आदि, "भगत प्रेमवश प्रकट सो होई" । अर्थात्, यह पूर्ण सगुण लीलाविहारी परमेश्वर हैं ।

पुनः, पाँचवाँ परमेश्वर "अस प्रभु हृदय अछत अविकारी" अर्थात् विकार रहित प्राणिमात्र के हृदय में ही विराजमान हैं । यह सर्वश्रेष्ठ परमेश्वर हैं । परन्तु इन सब परमेश्वरों की प्राप्ति गुरु द्वारा ही होती है, "यथा अनेक जन्म संस्कारात्" सद्‌गुरु सेवते बुधै, सन्तुष्टः स गुरुदेवः, आत्मरूपं प्रदर्शयेत् । "चक्षुरुन्मीलितं येन, तत्पदं दर्शितं येन" इत्यादि पंच परमेश्वर हैं ।

इन पञ्च परमेश्वरों में से आपने लीला विहारी को ही अपना श्रेष्ठ इष्ट माना । इनकी तो बाल-लीला से लेकर विवाह लीला, बन लीला, रावण संग्राम आदि लीलायें भी हैं, परन्तु आपने माधुर्य रस प्रधान परम श्रृङ्गारमय सर्वश्रेष्ठ विवाह लीला को ही अपनाया और उसी लीला में सदा परमानन्द लाभ करते रहते थे , "पुनि देखब रघुवीर विवाहू । लेब भलो विधि लोचन लाहू ।" इसी भाव से ओत प्रोत रहने के कारण आप विवाह-कलेवा, कोहवर-उत्सव में ही विभोर रहा करते थे । आपकी जीवन की दिनचर्या सदा यही बनी रही । इसी सुख में इनकी अनेक अनुभूति थी । अन्तकाल में सुख पूर्वक अपने स्वलोक साकेत धाम पधारकर श्री युगल सरकार की नित्य लीला में ये शामिल हो गये, "जहाँ सन्त सब जाहिँ ।" इस प्रकार आप एक उच्च कोटि के सन्त थे । श्री अयोध्या धाम के माधुर्य उपासकों में वे एक श्रेष्ठ विभूति थे ऐसा मेरा निश्चय है ।

मैं आपसे बहुत दिनों से ही परिचित रहा हूँ। आपकी विवाह लीला में भी कभी-कभी आया करता था। मुझे वे श्री लीला विहारी के गुरु कहकर सम्बोधित करते थे और श्री लीला विहारी के बहुत ही निकट आदर पूर्वक बैठाते थे। सचमुच आप रसिक शिरोमणि थे।

भगवान् श्रीराम कृष्ण आदि की लीलायें भी अनादि हैं। आज भी श्रीराम की "रामलीला" एवं श्रीकृष्ण की "रासलीला" लीला स्वरूपों ही के द्वारा की जाती है। यह भी भगवान् की नित्य लीला ही है, श्रीराम कृष्ण रूप ही है, यथा—

रामस्य नाम रूपं च लीलाधाम परात्परम्।
एतच्चतुष्टयं नित्यं सच्चिदानन्द विग्रहम्॥

अर्थात् भगवान् के नाम, रूप, लीला एवं धाम चारों ही नित्य हैं और श्रीराम रूप ही हैं। इस प्रकार लीला स्वरूपों द्वारा होने वाली लीलायें भी नित्य लीला ही हैं। यह वैदिक और प्रामाणिक है। मानस रामायण के परम वक्ता श्री कागभुसुण्डी जी अपनी जीवनी में सत्ताइस कल्प पूर्व की बातें कहते हैं, यथा—

"खेलौं सदा बालकन मीला, करौं सकल रघुनायक लीला।"

शिव संहिता, गर्ग संहिता तथा अन्यान्य ग्रन्थों में भी श्री राम लीला का प्रसङ्ग मिलता है। भक्तों ने खोज कर अपने सुख, शान्ति, कल्याण तथा मुक्ति का मार्ग श्रीराम कृष्ण आदि की लीला द्वारा ही निश्चय किया है।

श्रीशिव संहिता में भी श्री शिवजी रामलीला विधि बताते हैं—

द्विजराज कुलोद्भूतं सुरुपं सुमुखादिकम्।
सुभगं चारु चेष्टं च मधुर प्रिय भाषिणम्॥ आदि

अर्थात् कुलीन ब्राह्मण के बालक-सुन्दर, रूपवान, सर्वगुण लक्षण सम्पन्न, मधुरभाषी हों, छः वर्ष से उर्ध्व हों और तेरह वर्ष से कम वयस के हों, उन्हें यज्ञोपवीत, गुरु दीक्षा देकर लीला स्वरूप बनावे, विधिवत श्रृंगार युक्त कर पूजन करे, तब उनसे साक्षात् नित्य लीला सुख प्राप्त हो सकेगा। लीला स्वरूपों के द्वारा परात्पर सुख प्राप्त करने की प्रणाली शास्त्र विहित है, अनर्गल नहीं है। विस्तारभय से अधिक नहीं लिखा जा रहा है"—

"थोड़े महँ जानियहिँ सयाने।"

श्री पुजारी जी महाराज साधु-शास्त्र सम्मत वैदिक प्रमाण युक्त लीला विवाह कलेवा आदि के रूप में करते कराते रहे, नित्यानन्द लूटते लुटाते रहे—

"जियत राम विधु वदन निहारी। राम विरह करि मरन सँवारी।"

जीवन पर्यन्त उन्होंने लीला विहारी श्री सीताराम जी की युगल मूर्ति का दर्शन-सेवा प्राप्त कर, अन्त में परधाम प्राप्त किया। सन्तों की ऐसी ही दिनचर्या एवं जीवन चरित्र होते हैं—

"विधि हरि हर कवि कोविद बानी। कहत साधु महिमा सकुचानी।"

सन्तों की महिमा कही नहीं जा सकती।

अन्त में मैं लीला विहारी भगवान् श्री सीताराम जी से प्रार्थना करता हूँ कि श्री विवहुति भवन में श्री पुजारी जी रामशंकर शरणजी की जगह पर जो स्थलाभिषिक्त महानुभाव हैं वा भविष्य में होंगे, अपने पूर्वाचार्य की परम्परा के अनुसार ही लीला विहारी श्री युगल सरकार की दैनिक चर्या बनाये रखें

समय-समय पर विवाहोत्सव आदि लीला विस्तारपूर्वक करते रहें। श्री दुल्हा सरकार से माधुर्य भाव युक्त होकर नाना प्रकार से लाड़ लड़ावें। श्री सीताराम जी के चरण कमल में दिन दूनी रात चौगुनी प्रीति बढ़ती रहे—

"रति होउ, अविरल अमल, सिय रघुवीर पद नित-नित नयी।"

॥ इति शुभम् ॥

—:०:—

श्रद्धाञ्जलि

(लेखक—श्री अनन्त स्वामी सीतारामशरणजी महाराज, श्री लक्ष्मण किलाधीश, श्री अयोध्या)

त्रिभुवनविभवहेतवेऽप्यकुण्ठस्मृतिरजितात्मसुरादिभिर्विमृग्यात् ।
न चलति भगवत्पदारविन्दाल्लवनिमेषार्धमपि यः स वैष्णवाग्र्यः ॥ (भा० ११।२।५३)

"श्रीमद्भागवत् में श्री वैष्णव शिरोमणि की व्याख्या करते हुए श्री नवयोगेश्वर श्रीनिमि महाराज से कहते हैं—"राजन्! बड़े-बड़े देवता तथा ऋषि मुनि भी अपने हृदय को भगवन्मय बनाकर श्रीभगवच्चरणारविंद को ढूँढते रहते हैं। ऐसे भगवच्चरण कमलों के भजन से आधे पलक के लिये भी जो नहीं हटते निरन्तर श्री प्रभु के चरणारविंद का हृदय से आलिङ्गन करते रहते हैं तथा मुख से प्रभु के नामों का गायन करते रहते हैं उनके समस्त त्रिभुवन के राज्य भी तुच्छ हैं, अर्थात् ब्रह्मलोक पर्यन्त सुख-समुद्र भी उनको अपनी ओर आकृष्ट करने में समर्थ नहीं होते। उस प्रलोभन को देखकर भी जो अपने प्रभु के चरणारविन्द की मधुर स्मृति को नहीं छोड़ते वे ही महापुरुष वास्तव में श्री भगवत् भक्तों में वैष्णव शिरोमणि हैं।"

श्री मद्भागवत में ही कहा गया है कि एक ही अखण्ड तत्व को वेदान्ती ब्रह्म, योगी परमात्मा तथा भक्त भगवान् कहते हैं—

"ब्रह्मेति परमात्मेति भगवानिति शब्द्यते।" (भा०-१)

भगवान् के असाधारण ऐश्वर्य को दूर से देखकर वेदान्ती को केवल ब्रह्मज्योति का दर्शन होता है, अव्यक्त का अनुभव करता है। व्यक्ताव्यक्त के मध्य भाग से देखने के कारण योगी को परमात्म रूप में (स्वस्वरूप में) वही तत्व अनुभव में आता है, पर भक्त ज्ञान, शक्ति, बल, ऐश्वर्य, वीर्य, तेज, पराक्रम, स्थैर्य, धैर्य, चातुर्य, सत्य-काम, सत्य-संकल्प, सौन्दर्य-माधुर्य, लावण्य-सौरस्य, सौगन्ध्य आदि अनन्त दिव्य कल्याणमय गुणों से सम्पन्न भगवान् का दर्शन करता है। इस प्रकार ब्रह्मलोक पर्यन्त ऐश्वर्य से कैवल्य-मुक्ति—केवल आत्मा की प्राप्ति श्रेष्ठ है। कैवल्य मुक्ति से सच्चिदानन्दघन ब्रह्म की प्राप्ति श्रेष्ठ है। ब्रह्म की प्राप्ति से भी श्री भगवत् प्राप्ति श्रेष्ठ है और भगवत्स्वरूप में भी अवतारविग्रह की प्राप्ति श्रेष्ठ है, क्योंकि श्री हरि, नारायण आदि सच्चिदानन्दघन ऐश्वर्य विग्रहों की अपेक्षा लीलवैचित्र्य, रसवैचित्र्य की दृष्टि से अवतार विग्रहों के प्रति स्वाभाविक आकर्षण लोक वेद विदित है। रसमय अवतार विग्रहों में भी ऐश्वर्य एवं माधुर्य—दोनों दृष्टिकोण से श्री जानकीवल्लभ राघवेन्द्र का श्री विग्रह सुर-असुर, नर-राक्षस, सिंह-व्याघ्र, मत्स्य-कच्छप, सापिन-बिच्छी, आदि समस्त जड़-चेतन जीवों के लिये मनमोहक एवं हृदय

हारक है। महर्षि वाल्मीकि की अमर लेखनी से लिखा श्री रामरूप महिमा प्रदिपादक यह श्लोक सर्व विदित है:—

रुपौदार्यगुणैः पुंसां दृष्टिचित्तापहारिणाम्। (वाल्मीकि)

श्री राघवेन्द्र की नाम महिमा तो कोटि-कोटि हरिनाम के समान सर्वशास्त्र विदित है—

सहस्रनाम तातुल्यं राम नाम वरानने। (पद्मपुराण)

श्री राघवेन्द्र के असाधारण ऐश्वर्य एवं माधुर्य का पूर्ण विकास तो श्री सीताराम विवाह प्रकरण में ही हुआ है। अहल्या उद्धार, शिवधनुर्भङ्ग, परशुराम पराजय, आदि से श्री राघवेन्द्र के असाधारण ऐश्वर्य का बोध होता है। शक्तियों के सहित ब्रह्मा, विष्णु, महेश तथा समस्त मिथिलावासी नर-नारियों को विमोहित करने वाला असमोर्ध्व माधुर्य का प्राकट्य भी विवाह अवसर पर ही हुआ, यथा—

हरि हित सहित राम जब जोहे, रमा समेत रमापति मोहे।
जिन निज रूप मोहनी डारी, कीन्हें स्ववश नगर नर नारी॥

श्री सीताराम जी की विवाह-लीला के ही अनन्यतम उपासक श्री रसिक प्रवर श्रद्धेय श्रीरामशंकर शरण श्री पुजारी जी महाराज थे। आज से पच्चीस वर्ष पूर्व उनका समागम मुझको प्राप्त हुआ था। श्री पुजारीजी महाराज उस समय पूर्ण स्वस्थ थे। उनका वैराग्य असाधारण था। बिना धुले हुए मोटे वस्त्र धारण करना, कई मीलों तक पैदल यात्रा करना, भोजन प्रसाद में सत्तू घोलकर पी लेना, उनके प्रबल वैराग्य के परिचायक थे। उनका समग्र जीवन दुलहा-दुलहिन श्री सीताराम जी के चरणों में समर्पित था। वे वाह्य प्रदर्शनों से सर्वथा दूर रहते थे। उनकी वेष-भूषा से साधारण मनुष्य उनकी महिमा को सहसा नहीं समझ सकता था—

"सदा अपनपो रहहिँ दुराये, सब विधि कुशल कुवेष बनाये।"

इस चौपाई के भाव उनमें पूर्ण रूप से चरितार्थ थे। श्री अवध मिथिला के सिद्ध सन्तगण उनका अत्यन्त आदर करते थे।

सन् १९४९ ई० में एक बार श्री पुजारी जी महाराज लीला स्वरूपों के साथ श्री मिथिला जी पधारे। श्री रङ्गभूमि में श्री विवाह महोत्सव सम्पन्न हुआ। उन दिनों मैं श्री दुग्धमति तट पर मौन व्रत धारण कर नाम जप का नियम कर रहा था। श्री दुग्धमति तट से बाहर जाने का मेरा नियम नहीं था, किन्तु श्री पुजारी जी महाराज के आगमन का समाचार श्री जनकपुर धाम में बिजली की तरह सर्वत्र फैल गया। सभी मिथिलावासी सन्त, सद्गृहस्थ, प्रेमी श्री रङ्गभूमि में एकत्रित होने लगे तो मैं भी अपने नियम को भङ्ग कर उस महोत्सव में सम्मिलित हुआ।

पूरे समारोहों के साथ विवाह महोत्सव प्रारम्भ हुआ। साखोच्चार करने के लिये जब श्री सीतावल्लभ शरण जी खड़े हुए तब श्री पुजारी जी महाराज ने अपने सहज विनोद पूर्ण शब्द में मेरी ओर संकेत करते हुए श्री सीतावल्लभ शरण जी से कहा—"तुम्हारे दादा गुरु यहाँ बैठे हैं, आज का साखोच्चार वे ही करेंगे।" तब मैंने संस्कृत में साखोच्चार किया। साखोच्चार श्रवण करते ही श्री पुजारी जी महाराज प्रेम में विभोर हो गये। श्री मिथिला जी में श्री दुग्धमति के तट पर श्री बैदेही शरण जी महाराज की कुटी में भी झाँकी हुई। उस समय पूज्यपाद श्री धर्म भगवान् भी वहाँ विराजमान् थे। "राजी रहना भला रघुनन्दन" इस पद का मैंने गान किया जिसको श्रवण कर श्री धर्म भगवान् सहित समस्त सन्त समाज प्रेम-विभोर हो गये। मैंने भी श्री दुग्धमति पर अपनी गुफा में झाँकी कराई। श्री

महिसुता शरण जी के स्थान में भी झाँकी हुई। उस समय श्री मिथिला जी में जो आनन्द की वर्षा हुई वह अभूतपूर्व रही। श्री मिथिला जी के सन्त यही कहते थे कि जीवन में ऐसा आनन्द कभी भी प्राप्त नहीं हुआ। उस समय से जहाँ कहीं भी श्री विवाह उत्सव होता और मैं उपस्थित रहता तो साखोच्चार के लिये श्री पुजारी जी महाराज मेरी ही ओर संकेत करते थे।

अखिल भारतीय रूपकला संकीर्तन सम्मेलन सन् १९५९ में फतुहा पटना जिले में सम्पन्न हुआ। उस सम्मेलन में राष्ट्रपति श्री राजेन्द्र प्रसाद जी भी पधारे थे। श्री विवाह महोत्सव के अवसर पर जब साखोच्चार का समय आया, तब श्री पुजारी जी महाराज ने दुलहा पक्ष से श्री सत्यव्रत जी श्री ब्रह्मचारी जी महाराज को तथा दुलहिन पक्ष से मुझे आमन्त्रित किया। दोनों ओर से संस्कृत भाषा में साखोच्चार विस्तार रूप से हुआ। श्री पुजारी जी महाराज तो प्रेम में विभोर हो गये। उस साखोच्चार का प्रेमीजन आज भी स्मरण करते हैं।

विशेषता:—श्री पुजारी जी महाराज की सबसे बड़ी विशेषता यह रही की श्री विवाह महोत्सव किसी बड़े नगर में, बड़े सम्मेलन में हो अथवा किसी गरीब भक्त के घर में हो, उनके अनुराग में कोई अन्तर नहीं पड़ता था। जिस अनुराग से लाख-लाख जन समुदाय की भीड़ में विवाह के पदों का गान करते थे, उसी अनुराग से एक भक्त के कमरे में भी गान करते थे। उनकी दृष्टि श्रोताओं की भीड़ पर नहीं बल्कि दुलहिन-दुलहा की ओर रहती थी। उनकी वाणी रस-सिक्त होती थी। उनके हृदय में जो युगल प्रेम रससागर विद्यमान था, उसी की तरङ्गे वाणी के द्वारा परिस्फुटित होती रहती थी।

श्री विवाह रस के रसिक भक्त प्रवर श्री रामाजी महाराज की कृपा जो श्री पुजारी जी महाराज पर रही वह तो सर्व विदित है। श्री अवध के विख्यात सन्त श्री जानकी घाट के पण्डित श्री रामवल्लभाशरण जी महाराज, श्री सद्गुरु सदन गोला घाट के स्वामी रामवल्लभाशरण जी महाराज, श्री हनुमन्निवास के श्री स्वामी बाबा गोमतीदास जी महाराज, माँझा के श्री मौनी जी महाराज, श्री रूपकला जी महाराज, श्री मधुकर महाराज आदि विशिष्ट सन्तों की कृपा भी श्री पुजारी जी महाराज के प्रति विशेष रूप से रही। गोला घाट के पूज्यपाद श्री महाराज जी के समय में तो श्री पुजारी जी महाराज अपने युगल सरकार दुलहा-दुलहिन के साथ सायंकाल में गोला घाट पर ही विराजते थे। कभी श्रृंगार में, कभी सादे वेष में झाँकी झूला होता रहता था और सबों का रात का व्यारू भी गोला घाट ही पर होता था। यह क्रम आज से पच्चीस वर्ष पूर्व तक प्रायः चलता ही रहा।

श्री पुजारी जी महाराज ने भौतिक द्रव्य का कभी भी आदर नहीं किया। लाखों रुपये भक्तों के द्वारा अयाचित प्राप्त हुए, किन्तु, उन्होंने उनका स्वयं उपयोग नहीं कर सन्तों की सेवा में ही लगा दिया। उनके जीवन में अनेकों अलौकिक चमत्कार हुए। ऐसे अनेक अवसर आये जब वे पन्द्रह-बीस दिन तक ज्वर के कारण लङ्घन में रहे, उठने की शक्ति भी नहीं रही, परन्तु श्री विवाह महोत्सव के मुहूर्त आते ही सहसा उनमें अलौकिक स्फूर्ति आ जाती थी, जिससे उस लङ्घन की अवस्था में भी लगातार छः घण्टे तक झाल बजाते हुए पद गान करते हुए विवाह महोत्सव सम्पन्न करते थे। इन चमत्कारों को वे कभी महत्व नहीं देते थे, अतः उनकी चर्चा नहीं की जा रही है। उनका अनुपम वैराग्य एवं दुलहिन-दुलहा के प्रति अलौकिक अनुराग ही उनके जीवन के सर्वश्रेष्ठ चमत्कार थे, जिसका वर्णन अनन्त काल तक किया जा सकता है।

श्री पुजारी जी महाराज मधुर रस के उपासक थे। श्री सीताराम विवाह के प्रति उनकी निष्ठा ने

असाधारण थो। उनके श्री युगल सरकार सर्वदा मौर-मौरी, मेंहदी महावर धारण कर कोहबर में ही विविध विलास करते रहते हैं:—

"कौतुक विनोद प्रमोद प्रेम न जाइ कहि जानहिँ अली।"

मानस की इस पंक्ति में ही वे अपने कोहबर प्रसङ्ग का समापन करते थे। उनके उत्तराधिकारी वर्तमान महन्त श्री बैजनाथशरण जी उनकी उपासना परम्परा का सम्यक निर्वाह कर रहे हैं, यह प्रसन्नता की बात है। उनके शिष्य प्रशिष्यों ने उनके जीवन चरित्र प्रकाशित करने का जो पवित्र संकल्प किया है वह सर्वथा श्लाध्य है। मधुर रस उपासकों, विवाह लीला रसिकों को इस ग्रन्थ से विशेष प्रेरणा मिलेगी, ऐसी आशा है।

हम श्रद्धेय श्री पुजारी जी महाराज के प्रति अपनी श्रद्धा-सुमनाञ्जलि अर्पण करते हैं।

—:०:—

॥ श्री पुजारी जी महाराज के समान श्री पुजारी जी महाराज ही थे ॥

(लेखक—श्री अनन्त भक्तमाली मैथिलीशरण जी महाराज, श्री युगल माधुरी कुञ्ज, अयोध्या)

आज अनन्त श्री विभूषित श्री पुजारी जी महाराज, रसिकाधिराज श्रीरामशंकरशरण जी महाराज के सम्बन्ध में मैंने श्री लक्ष्मण किलाधीश परम पूज्य अनन्त श्री सम्पन्न श्री सीतारामशरण जी का लेख पढ़वाकर सुना। उसे सुनकर हमारा हृदय गद्‌गद हो गया। श्री किलाधीश जी ने सचमुच ही श्री पुजारी जी महाराज का साकार रूप अपने लेख में प्रकाशित कर दिया है। उसके पढ़ते ही तो मैं श्री पुजारी जी महाराज के स्वरूप में निमग्न हो गया। इससे अधिक मैं क्या वर्णन कर सकता हूँ। मैं तो श्री किलाधीश के ही शब्दों का हृदय से अनुमोदन करता हूँ।

धन्य है श्री पुजारी जी महाराज, जिनके समान स्वयं श्री पुजारी जी महाराज ही थे।

॥ इति शुभम् ॥

—::—

॥ श्रीमते रामानन्दाय नमः ॥

दिव्य विभूति वैभव

प्रातः स्मरणीय पूज्यपाद श्री पुजारी जी महाराज की पावन स्मृति

(लेखक—कृपा प्राप्त सेवक-नृत्यगोपालदास (अनन्त श्री महान्त बाबा मणिराम की छावनी, अयोध्या)

भक्ति भक्त भगवंत गुरु, चतुर नाम वपु एक।
इनके पद वंदन किये, नाशत विघ्न अनेक ॥

अनन्तानन्त ब्रह्माण्डनायक परात्पर पूर्ण ब्रह्म मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् श्री सीताराम जी दिव्य धाम त्रिपाद विभूति श्री साकेत में विराजमान रहकर नित्य मुक्त आत्माओं को सदा दिव्य सुख प्रदान करते रहते हैं। अवतार काल में लीला के प्रयोजनानुकूल श्री भगवान् उन दिव्य आत्माओं के साथ अवतीर्ण होते हैं। इसके अतिरिक्त समय-समय पर विशिष्ट कार्यानुसार दिव्य विभूतियों को भेजकर धर्म संरक्षण, मर्यादा स्थापन, भक्ति प्रीति मार्ग प्रदर्शन कराते हैं। उन्हीं दिव्य विभूतियों में से

एकतम हैं [पूज्यपाद श्री पुजारी जी श्रीरामशंकरशरण जी महाराज, संस्थापक श्री विवहुती भवन, श्री अयोध्या जी।

श्री भगवान् एवं उनके भक्त अभिन्न होते हैं। सच्चिदानन्दघन का सर्वतोभावेन सान्निध्य प्रेमीजनों को तद्रूप बना लेता है। इसी से सन्त एवं भगवान् की समता की गई है, यथा सन्त भगवन्त अन्तर निरन्तर नहीं।"

तन करि मन करि वचन करि, काहू दूषित नाहिँ।
तुलसी ऐसे सन्तजन, राम रूप जग माहिँ ॥

शान्त महात्मा वसन्त के समान लोगों का हित करते हुए जगत् में विचरते हैं। ये स्वयं संसार रूपी भयङ्कर समुद्र को तर चुके। पर,दूसरों को केवल करुणा से तारते हैं,यथा—"शान्ता महान्तो निवसन्ति सन्तो, वसन्त बल्लोक हितं चरन्तः। तीर्णः स्वयं भीम भवार्णवं जनान हेतु नान्यानपि तारयन्तः सन्त महात्माओं से भी ऊँची श्रेणी आचार्य की है, जिनके दिव्याचरण एवं शिक्षा से अनन्त जीवों का कल्याण होता है—"आचिनोति हि शास्त्रार्थानाचारे स्थापयत्यपि। स्वयं आचरते यस्तु स आचार्य, इति स्मृतः"। जन्म जन्मान्तर से पठित वेद शास्त्र फल स्वरूप प्राप्त भक्ति प्रेम स्वरूप आचार्य श्री सद्गुरुदेव अपनी दिव्य कल्याणकारिणी लीलाओं (प्रेरणाप्रद जीवन की घटनाओं) से आश्रितजनों को शिक्षा प्रदान करते हैं।

निरन्तराभ्यास दृढ़ीकृतात्मनाम् त्वत्पादसेवा कृत निश्चयात्मनाम्।
त्वन्नाम कीर्त्याहत किल्विषाणाम् सीतासमे तस्य गृहेहृदब्जे ॥

श्री भगवान् के सतत नामस्मरण एवं श्री चरणारविन्दों की सेवा की दृढ़ भावना से जिनके पाप ताप विनष्ट हो चुके हैं। उनके हृदय में श्री सीताराम जी का वास होता है।

अद्वेष्टा सर्वभूतानाम् मैत्रः करुण एव च।
निर्ममो निरहंकारः समदुःखसुखः क्षमी ॥
सन्तुष्टः सततं योगी यतात्मा दृढ़निश्चयः।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्यो मद्भक्तः समे प्रियः ॥
तुल्यनिन्दास्तुतिर्मौनी सन्तुष्टो येन केनचित्।
अनिकेतः स्थिरमतिर्भक्तिमान्मे प्रियो नरः ॥

श्रीमद्भागवतगीतोक्त भक्ति योगी के अशेष लक्षण हमारे चरित्रनायक श्री पुजारी जी महाराज में पूर्णरूपेण घटित होते थे।

निष्किञ्चना मय्यनुरक्त चेतसः
शान्ता महान्तोऽखिल जीववत्सलाः।
कामैरनालब्ध धियो जु षन्तियत्
तन्नैरपेक्ष्यं नविदुः सुखं मम ॥

श्रीमद्भागवत में वर्णित इस श्लोक के अनुसार पूज्य श्री महाराज जी की निष्किञ्चनता, अखिल जीव वत्सलता, लीला के विभिन्न अवसरों पर दृष्टिगोचर होती थी। श्रीराम रङ्गरङ्गीले, विषय रसभूले,

प्रेम हिंडोलन झूले के दिव्य सुख को भला कौन जान सकता है। "जिसे किसी की अपेक्षा नहीं, जो जगत् के चिन्तन से सर्वथा उपरत होकर मेरे ही मनन चिन्तन में तल्लीन रहता है और राग द्वेष न रखकर सबके प्रति समान दृष्टि रखता है, उस महात्मा के पीछे-पीछे मैं निरन्तर यह सोचकर घूमा करता हूँ कि उसके चरणों की धूलि उड़कर मेरे ऊपर पड़ जाय और मैं पवित्र हो जाऊँ।"

निरपेक्षं मुनिं शान्तं निर्वैरं समदर्शनम्।
अनुव्रजाम्यहं नित्यं पूयेयेत्यङ्घ्रिरेणुभिः॥

धन्य हैं ऐसे महाभागवत् जो प्रभु के प्यारे हैं।

"रसो वै स" इति श्रुति वाक्य से श्री भगवान् को रसरूप कहा गया है। रसराजशेखर पर जिन्होंने तन-मन-धन लुटा दिया है वे रसिक कहलाते हैं। भाव सरिता में रसिकजन ही अवगाहन कर सकते हैं।

"रसिक बिना यह भाव और सपनेहुँ नहिँ पावे।"

पुनः "भगवत् रसिक, रसिक को बातें रसिक बिना कोई समुझि सकैना" श्री भगवान् में सभी रस सर्वदा एक रूप से रससार सर्वरूपता से स्थित हैं। रसिक भक्तजन अपने-अपने भावों के अनुसार भगवान् की भक्ति करते हैं। भक्तों के इसी प्रेमपाश में नित्यमुक्त भगवान भी बँध जाते हैं यथा—

सदामुक्तोऽपि बद्धोऽस्मि भक्तेषु स्नेहरज्जुभिः।
अजितोऽपि जितोऽहं तैरवशोऽपि वशीकृतः॥

व्यापक, निरञ्जन, निराकार ब्रह्म को भी माता कौशल्या ने अपनी गोद का खिलौना बना लिया।

व्यापक ब्रह्म निरञ्जन, निर्गुण विगत विनोद।
सो अज प्रेम भगतिवश, कौशल्या की गोद॥

गोद में ही नहीं, माता यशोदा जी ने तो श्री श्यामसुन्दर को रज्जु में बाँधकर प्रभु का नया नाम दामोदर रख दिया। भक्त जिस भाव से, जिस प्रकार से, श्री भगवान् की भक्ति करता है श्री भगवान् उस भाव की पूर्ति करते हैं:—

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्।

मुख्यतया, पञ्चरसों की भावना भक्तजन करते हैं, "शान्त, दास्य, वात्सल्य, सख्य एवं मधुर।" रस की परिपाकता में सौगन्ध्य, मिठास, सौन्दर्य एवं मृदुता आ जाती है। जहाँ ये न हो, वहाँ समझना चाहिये कि रस का परिपाक हुआ ही नहीं। किसी भी भाव के भावुक हों, होनी चाहिये परिपक्वता। पूर्वाचार्य रसिकजन अपने-अपने रसों में पूर्ण पगे थे। रस स्थिति गोपनीय होती है, क्रिया रूप में किञ्चित उसका प्रकाश होता है। रसराज चूड़ामणि पदकमल भ्रमर या मुख कंज लोचन कंज या समस्त श्री कंदर्प कोटि कमनीय किशोर मूर्ति कंज के अनूठे भ्रमर थे श्री पुजारी जी महाराज। भक्तियुक्त भक्त सर्वत्र भगवत् दर्शन करता है। प्रेमी प्रेमास्पद को सर्वत्र निहारता है। यही है अद्वैत भावना। "मैं पना जहाँ "तू" एवं तेरे में विलीन हो जाता है, इस ऊँची स्थिति को समझने का सामर्थ्य सभी में नहीं है। प्रभु कृपा पात्र विरले इस भाव को समझ पाते हैं। पूज्य श्री महाराजजी ने लीला स्वरूपों में पूर्ण निष्ठा के साथ प्रभु प्रेमास्पद दूलहा-दुलहिन स्वरूप श्री सीताराम जी का दर्शन किया, लाड़ लड़ाये, खेल खेलाये

मिथिला की भावना से। श्री विवाहोत्सव में सभी रसों का परिपाक, पूर्ण गुणों का प्राकट्य, निखिल सौन्दर्य, नित्य नूतन मंगल प्राप्त होते हैं प्रेमीजनों को इसीलिये पंचमी तिथि विवाह उत्सव के रूप में मान्यता दी गयी। "सादा जीवन उच्च विचार" श्री महाराज जी में यह महावाक्य पूर्ण रूपेण घटित होता था। साधारण वस्त्र, रहन-सहन सीधा सरल, पर विचारों की महानता थी। सामान्य जन तो भाव पक्ष में चकित रह जाया करते थे, बाद में ही सोच पाते थे भाव की गहराई को, पूर्व में नहीं। अनन्त गुणों का वर्णन स्वल्पकाय कलेवर में सम्भव नहीं।

एक गुण सदा स्मरणीय एवं मननीय है। दीन दास के ऊपर अपार स्नेह बना हुआ था, न जाने अयोध्यावासी की भावना से या मिथिलावासी की भावना से। दिव्य देह प्राप्ति के पूर्व में प्रधान सेवकों से स्थानीय सार-संभार का अतुल भार दास को सौंपने के लिये कहकर दास के प्रति अपार प्रेम प्रकट किया श्री महाराज जी ने। दास ने यथासाध्य संभालकर भारवाहन योग्य, प्रिय कृपापात्र, वास्तविक अधिकारी, सन्तजन प्रिय सेवक, हृदयहारी श्री वैजनाज शरण जी को सौंप दिया। वही चाल अलबेली, वही प्रेम की मस्ती, वही भाव गरिमा है श्री वैजनाथ शरण जी में। भगवान् श्री दुलहा-दुलहिन सरकार सदा इस भाव को निर्वाहें।

इन्हीं शब्दों के साथ पूज्यपाद श्री पुजारीजी महाराज के पावन श्री चरणों में प्रेमपूरित पुष्पांजलि सादर समर्पित है।

—:-:—

पुजारी श्री रामशंकर शरण जी, श्री विवहुती भवन, अयोध्या जी की संस्मृति

(लेखक—श्री अनन्त पंडित अखिलेश्वरदास जी महाराज, श्री रामकुञ्ज रामघाट अयोध्या)

श्री पुजारी जी महाराज अनन्त अनुरागी गण्यमान्य महात्माओं में एक थे। वे श्रृंगार रस के उपासक थे। श्री लीलास्वरूपों में आपकी उत्कृष्ट कोटि की भावना थी। श्री भगवान् के पंचविध रूप, यथा पर, व्यूह, विभव, अन्तर्यामी और अर्चावतार, में से जैसे हमारे पूर्वाचार्यों ने अर्चावतार रूप में विशेष श्रद्धा, भक्ति एवं प्रेम किया है, वैसे ही श्री पुजारी जी महाराज ने भगवान् श्रीरामजी के लीलास्वरूपों में श्री रामजी के पररूप की उत्कृष्ट श्रद्धा-भक्ति की है।

श्रीरामजी का स्वरूप तो कालादि से अपरिच्छिन्न तथा संसारास्पष्ट श्रीसाकेत धाम श्री हनुमदादि नित्य परिकरों के अनुभव का विषय है। उनके व्यूहरूप संकर्षण प्रद्युम्न, अनिरुद्ध आदि भी नित्य सूरियों के अनुभव के विषय हैं। मत्स्य, कूर्म आदि अवतार उनके विभवावतार कहे जाते हैं। "अन्तः प्रविष्टः शास्ता जानानाम्" इस श्रुतिवाक्य के आधार से सकल चेतनों के हृदय में प्रवेश करके समस्त प्रवृत्तियों का नियमन करने वाला अन्तर्यामी कहलाता है। आचार्यों ने भगवान् के इन चार रूपों में, देश, काल, एवं करणों के विप्रकर्ष होने से, हम पामरों का अधिकार है ही नहीं माना है। हम सबों का अधिकार केवल अर्चा अवतार रूप भगवान् में है। इसी कारण से हम लोगों के पूर्वाचार्यों ने इसी रूप में अपनी-अपनी विशेष श्रद्धा का अनुबन्ध प्रदर्शित किया है। इसी प्रकार श्री पुजारी जी महाराज ने भगवान् के लीला स्वरूप में अपना विशेष अनुबन्ध प्रदर्शित किया है। श्री पुजारी जी महाराज श्री लीला स्वरूपों की वैसी ही

सेवा करते थे, जैसे कोई भक्त भगवान् के अर्चा विग्रह को मन्दिर में पधराकर परात्पर साक्षात् पर प्रभु मानकर करता है। उनकी सारी क्रियायें और समस्त व्यवहार इन्हीं के लिये होते हैं।

यद्यपि परात्पर प्रभु श्रीरामजी की वनगमन लीला, खरदूषण निधन लीला, बालिवध, सेतुबन्ध आदि अनन्त लीलायें हैं, परन्तु श्री पुजारी जी महाराज को श्री मिथिला एवं श्री अयोध्या जी की ही लीलायें विशेष प्रिय थीं। जब-जब आपके हृदय में द्विपाद विभूति (श्री अयोध्या-मिथिला) के चरित्र दर्शन की विशेष उत्कण्ठा होती थी, तब तक श्री लीला स्वरूपों के द्वारा उस उत्कण्ठा को शमन कर आनन्द विभोर हो जाया करते थे। श्री अयोध्या और मिथिला के चरित्रों में भी आपको श्री मिथिला के चरित्र विशेष प्रिय थे। इसलिये आप श्री विवाहोत्सव बराबर किया करते थे। श्री रामनवमी, श्री जानकी नवमी और ज्येष्ठ मास छोड़कर बाकी सभी महीनों की पंचमी तिथियों में विवाहोत्सव नियम पूर्वक हुआ करता था। अवान्तर में यदि किसी प्रेमी को विवाह उत्सव देखने की विशेष उत्कण्ठा होती तो अन्य तिथियों में भी विवाह उत्सव किया जाता था। इस प्रकार आप सदा वैवाहिक भाव में ही निमग्न रहते थे। ये ही आपका जप, तप, योग, यज्ञ या सभी साधन था, यही आपकी उपासना थी, जो श्री गोस्वामी जी के

सिय रघुवर विवाह, जे सप्रेम गावहिं सुनहिं।
तिन कहँ सदा उछाह, मङ्गलायतन राम-जसु ॥

इन पंक्तियों में निहित भाव के अनुरूप थी। इस आशीर्वादात्मक वचन में आपका पूर्ण विश्वास और श्रद्धा आजीवन बना रहा, गद्गद हृदय से मानस रामायण के आधार पर विवाह गान बराबर करते थे और श्रद्धालु भक्तों को सुनाते थे। इसलिये आपने अपने आश्रम का नाम विवहुती भवन रखा था।

श्री पुजारी जी महाराज जब तब मानलीला भी किया करते थे। उनकी मानलीला विलक्षणता से भरी हुई थी। जब कभी परिकर या लीला स्वरूप उनकी आन्तरिक रुचि के विरुद्ध कुछ कर बैठते थे, तब श्री पुजारी जी महाराज खाना-पीना त्यागकर अलग बैठ जाते थे। यह मान तब तक चलता था जब तक अपराधी अपने अपराध को स्वीकार कर क्षमा याचना नहीं करता था और इस अपराध की पुनरावृत्ति नहीं करने का आश्वाशन नहीं देता था।

विवाह गान की फल-स्तुति में श्री गोस्वामी जी ने लिखा है:—

उपवीत ब्याह उछाह मङ्गल सुनि जे सादर गावहीं।
वैदेहि राम प्रसाद ते जन सर्वदा सुख पावहीं ॥

श्री पुजारी जी ने इस फल-स्तुति के अनुसार उभय लोकों का सुख पूर्ण रूपेण प्राप्त किया। यहाँ उन्होंने पूर्ण वैभव सम्पादन करके पूर्ण सुख किया।

उन्होंने अपने स्थान का विस्तार किया, स्थान-संचालन करने के लिये भूमि अर्जन भी किया, अनेक भण्डारे किये, वैष्णव सन्त-महात्माओं की निरन्तर सेवा की और आराधना में रत रहकर पञ्च-भौतिक शरीर विसर्जन कर दिव्य शरीर से भगवत् धाम में पधार गये तथा भगवत् धामीय सुखों का भोग कर रहे हैं।

—:-:—

पूज्य श्री पुजारी जी महाराज को हार्दिक श्रद्धाञ्जलि

(लेखक—महान्त श्री सियाराम दास, श्री सीता राम निवास, श्री जानकी घाट, अयोध्या)

इस असार संसार में अपने भक्तों को सुख प्रदान करने हेतु तथा विमुख जीवों को अपने चरितामृत के द्वारा कल्याण मार्ग प्रशस्त करने के लिये प्रभु का अवतार होता है,

यथा—पानेन ते देव कथासुधायाः प्रवृद्धभक्त्या ये विश्वाशया।
वैराग्यसारं प्रतिलभ्य बोधं यथाञ्जसान्वीयुर कुण्ठधिरायम् ॥

(श्रीमद्भागवत)

कथा रूपी अमृत के पान से भक्तिमय बुद्धि प्राप्त होती है और सांसारिक वस्तुओं से बैराग्य होता है, सच्चे स्वरूप का ज्ञान हो जाता है और तब ऐसे प्रयास होने लगते हैं जिससे श्री भगवत् सानिध्य प्राप्त हो जाता है।

पुनः—यन्न ब्रजन्त्यघभिदो रचनानुवादा च्छृण्वन्ति येऽन्य विषयाः कुकथा मतिघ्नी।
यास्तुश्रृताहतभगैर्नृभिरात्तसारा स्तांस्तानक्षिपन्त्यशरणेषु तमः सुहन्त ॥
येऽभ्यर्थितामपि च नोनृगतिं प्रपन्ना ज्ञानंच तत्वविषयं सहधर्म यत्र।
नाराधनं भगवतो वितन्त्यमुष्य सम्मोहितवितितयाऽवत माययाते ॥

जो प्रभु की पातकहारिणी कथा सुधा को त्यागकर बुद्धि भ्रष्ट करने वाली विषय चर्चा किया करते है वैसे लोग प्रभु के नित्य धाम में नहीं जा सकते हैं। विषय वार्ता को तो अभागे लोग ही सुनते हैं, क्योंकि विषय चर्चा करने वालों के पूर्व सुकृत नष्ट हो जाते हैं और वे नर्क में डाल दिये जाते हैं। मानव जीवन में तो धर्म और तत्वज्ञान दोनों ही प्राप्त हो सकते हैं। देवता लोग तक मानव शरीर प्राप्ति की आकांक्षा रखते हैं। ऐसे दुर्लभ मानव शरीर प्राप्त करके जो हतभाग्य मानव प्रभु की आराधना नहीं करते हैं वे अवश्य-मेव प्रवल माया से मोहित हैं। ऐसे ही मार्ग भ्रष्ट मानव को प्रभु के सम्मुख करने कराने के लिये भगवान के ही नित्य धाम से नित्य भक्तों का प्राकट्य होता है। भक्त तथा भगवान् के प्राकट्य में अन्तर मात्र इतना ही का है कि भगवान् का प्राकटय स्वेच्छा से और भक्त का प्राकट्य प्रभु इच्छा से होता है, यथा—

त्वदाश्रितानां जगदुद्भवस्थिति प्रनाश विमोचनादयः।
भवन्ति लीला विधयश्च वैदिकाः त्वदीय गंभीर मनोनुसारिणः ॥

प्रभु ! आपके परम गंभीर मन के अनुसार आप के भक्तजनों का संसार में प्रादुर्भाव होता है। आपके आश्रितों का लीला धाम में आना तथा परम धाम में जाना आदि क्रियायें आपके आधीन हैं। जिस तरह कोई साधारण राजा आवश्यकतानुसार अपने किसी भी अनुचर को देश के किसी भाग में निर्धारित अवधि के लिये भेज सकता है, ठीक इसी प्रकार श्री सीतारामजी अपने सेवा परायण नित्य भक्त को भेजकर विमुख जीवों का कल्याण करते हैं। ऐसे ही अवतारियों में हमारे परम पूज्य श्री राम शङ्कर शरण पुजारी जी महाराज रहे हैं। इनके विषय में कुछ कहने की कोशिश करना गूँगे के द्वारा भोजन का स्वाद बतलाने के जैसा होगा। वे सदा प्रेम समाधिस्थ रहते हुये श्री सीताराम जी के अनन्योपासक में थे। हमें जब भी उनका दर्शन एवं सत्संग प्राप्त हुआ उससे जो आनन्द उपलब्ध हुआ वह अकथनीय पर अविस्मरणीय है।

वाग्गद्गदा द्रवते यस्य चित्तम्
रुदत्य भीक्ष्णं हसति क्वचिच्च ।
विलज्य उद्गायति नृत्यते च
मद्भक्ति युक्तो भुवनं पुनाति ॥

श्री भगवान् का उपरोक्त कथन जिसमें प्रेमातुर भक्त के लक्षणों का वर्णन किया गया है अक्षरशः पूज्य श्री पुजारी जी के जीवन में चरितार्थ हुआ। उन्होंने सदा प्रेमसमाधिस्थ होते हुये भी अनेकों भगवत् विमुख जीवों को प्रभु के सम्मुख किया और में हम सबों के हृदय पट पर एक पावन स्मृति छोड़ अपने परम प्रेमास्पद श्री सीतारामजी, प्रिया प्रीतम की नित्य सेवा में लीन हो गये।

इत्यऽलम् ।

मन का मलाल

(लेखकः—श्री ब्रह्मचारी विश्वनाथ दास, "आधयात्म प्रवक्ता" श्री जानकी घाट, अयोध्या)

श्री पुजारी जी महाराज का पावन दर्शन तथा हृदय-विकार को स्वच्छ कर देने वाला संभाषण हमें 'तन अति रहेउ अचेत' की अवस्था में प्राप्त हुआ। मुझे किंचित मात्र भी ऐसा अनुमान नहीं हुआ कि वे इतने शीघ्र हम सबों को छोड़कर चले जायगें। मनोकामना पूरी न कर सका इसका मलाल आज तक बना हुआ है। फिर भी अल्प सत्संग से जो अमर प्रेरणा हमें मिली वह अमिट रूप से वर्तमान है—

जीवन की वह अमर प्रेरणा, अन्तस्थ का मधुमय गान।
मनमन्दिर का गुरुवर तुझको, सादर अर्पित दण्ड प्रणाम ॥

———

॥ श्री जानकी वल्लभो विजयते ॥

परम त्यागी, अनुरागी एवं परम दानी श्री पुजारी जी महाराज, श्री विवहुती भवन को श्रद्धांजलि

(लेखक—श्री कौशलकिशोर मिश्र, 'म्युनिस्पल कमिश्नर,' फैजाबाद, तुलसी नगर, अयोध्या)

प्रेम रस रूप श्री रामभद्र जू की आह्लादिनी शक्ति श्री सीताजी महाभाव स्वरूपा हैं। यह महाभाव प्रेम की चरम परिणति है। जिस प्रेम की चरम परिणति महाभाव है वह प्रेम मानव मन की वृत्ति नहीं है। लोक में जिसे प्रेम कहा जाता है वह तो अन्तःकरण वृत्ति-विशेष है। प्रकृति प्रेम का लक्ष्य स्वयं सुख प्राप्त करना है, स्वयं सुखी होने की भावना उसमें अन्तर्हित रहती है श्रुति का ऐसा स्पष्ट उद्घोष है—

नवा अरे पुत्रकामाय पुत्रः प्रियो भवति
आत्मनस्तु कामाय पुत्रः प्रियो भवति ।

पिता की निजी प्रीति के लिये ही पुत्र प्रिय होता है। जैसे ही पुत्र से सुख नहीं मिलता, पिता द्वारा उसका त्याग हो जाता है। यही रीति सांसारिक सभी वस्तुओं के सम्बन्ध में लागू है। लौकिक प्रेम में स्वसुख-वासना रहने के कारण वह 'प्रेम' नहीं किन्तु 'काम' है।

प्रेम तो अनाद्यन्त आनन्द स्वरूप परब्रह्म की स्वरूप शक्ति है। परब्रह्म राघवेन्द्र श्री रामभद्र जू का स्वरूप सच्चिदानन्दमय है। अतः उनकी स्वरूप शक्ति की अभिव्यक्ति भी त्रिविध है, यथा 'सत्' अंश में 'सन्धिनी' अर्थात् 'सत्ता' 'चिद्' अंश में 'सम्वित' यानी 'ज्ञान' और 'आनन्द' अंश में 'आह्लादिनी'।

'आह्लादिनी' शक्ति का प्रेम ही सार है। श्री भगवान् जिस प्रकार नित्य सिद्ध वस्तु हैं, भगवत् प्रेम भी उसी प्रकार नित्यसिद्ध है। इसलिये, 'प्राकृत प्रेम' (काम) और 'भगवत् प्रेम' में मौलिक भिन्नता है। अन्तःकरण की वृत्ति होने के कारण काम की गति मायिक वस्तुओं की ओर है और आह्लादिनी सार प्रेम की गति श्री भगवान् की ओर है। इसमें भगवान् को ही प्रसन्न करने की भावना है। भगवत् प्रेम के उदय होने से ही 'काम' दूर हो जाता है एवं प्रेम के द्वारा श्री भगवान् वशीभूत हो जाते हैं। प्रेम का ऐसा असाधारण प्रभाव है।

उपरोक्त प्रेम परिभाषा की कसौटी पर कसने से श्री महान्त रामशंकर शरणजी महाराज पूर्ण रूप से खरे प्रमाणित होते हैं। उनका सारा जीवन भगवत प्रेम से सराबोर था, उनके जीवन के सारे-के-सारे कृत्य श्री भगवान को ही प्रसन्न करने के लिये हुआ करते थे। भक्ति के प्रधान चार अंग, नाम, रूप, लीला, धाम में चारों पर श्री महाराज जी का अटल अनुराग था। नाम जप तो अहर्निश चलता ही रहता था, रूप सुधा के पान में वे बेसुध रहा करते थे, धामसेवन तो आजीवन करते ही रहे और प्रेमलीला, प्रेम-चरित्र सदा सुनते सुनाते रहे। लौकिक कामना तो उनसे कोसों दूर रहा करती थी।

महा त्यागी और महादानी

उनके त्याग का एक नमूना प्रस्तुत करते हुए कहना है कि एक बार श्री हनुमत् निवास मंदिर के बगल में ही श्री महान्त राम जिआवन दास जी का एक वृहदाकार मन्दिर है, जिसकी कीमत पचास हजार रुपये से भी अधिक हो सकती है। उस मन्दिर को श्री पुजारीजी महाराज को ही रजिस्ट्री करने के लिये उनसे स्वीकृति माँगी गयी। तब उन्होंने तत्काल उत्तर दिया कि मुझे जायदाद एवं सम्पत्ति की कोई आवश्यकता नहीं है। हमने तो अपने को अपने आराध्यदेव की सेवा के लिये ही अर्पण कर रखा है। वे ही चाहेंगे सो करायेंगे। इस प्रकार के त्याग का नमूना आज के युग में प्रायः नहीं के बराबर है। दूसरी ओर उनकी दानवृत्ति तो श्री अवध में सर्वोपरि कही जा सकती है। अपने जीवन में न मालूम उन्होंने कितनी ब्राह्मण-कन्याओं का विवाह कराया, उसका व्यय वहन किया और उन कन्याओं की वापसी पर भी बराबर श्री किशोरी जी के प्रसाद स्वरूप साड़ियाँ दान किया करते थे। स्थान में जो कुछ प्राप्त होता था सन्त-सेवा एवं कंगला सेवा में लुटा दिया जाता था। इस प्रकार से श्री महाराज जी के भगवत् प्रेम का वर्णन करना मानव लेखनी के बश की बात नहीं है। उनके चरित्र को देखने से लगता है कि उन्होंने साक्षात् श्री राघवेन्द्र सरकार के चरणों का सानिध्य प्राप्त कर लिया था।

॥ सीतारामभ्यां नमः ॥

अनन्त श्री विभूषित श्री पुजारी जी महाराज श्री विवहुती भवन का संक्षिप्त जीवन चरित्र

(लेखक—रामयणी श्री लक्ष्मणदास व्यास, अयोध्या सत्संग आश्रम)

श्री पुजारी जी महाराज (श्री रामशङ्कर शरणजी) के परमपावन एवं सुहावन जीवन चरित्र का गान करने में अपार हर्षोल्लास होता है। आज से बीस वर्ष पूर्व से उनके साथ हमारा निजी सम्बन्ध घनिष्ठ प्रेममय रहा है। उनके जीवन की नित्य नूतन रहस्यभरी लीलायें आज भी नेत्रों के समाने साकार हो जाती हैं। श्री विवाह उपासना के पूर्वाचार्य भक्तवर श्री रामाजी महाराज तो प्राकृत दुलहा में भी नित्य दुलहा की छवि का अवलोकन करते थे और दुलहा की पालकी के पीछे-पीछे व्यजन लेकर दौड़ पड़ते थे। वे सारे-के-सारे भाव अक्षरशः श्री पुजारी जी महाराज में परिलक्षित थे।

"कंचन को मृत्तिका मैं मानत, कामिनि काष्ठ शिला पहिचानत" ।। (वैराग्य संदीपनी)।

'तुलसी भूलि गये रस एहा, ते जन प्रगट राम की देहा ।'

श्री पुजारी जी महाराज के आचरण में उपरोक्त पंक्तियों के भाव पूर्णरूपेण चरितार्थ थे। वे तो एकमात्र श्री मिथिला बिहारिणी जू के अनन्य उपासक, प्रेमभक्ति परायण एवं सांसारिक वासना से सर्वथा रहित थे। उनके लिये सचमुच कंचन एवं कामिनी मृत्तिकावत और काष्ठवत ही प्रतीत होते थे। उनके यशगान एवं स्मरण मात्र से आज भी भक्तजन का हृदय विशुद्ध भावनामय बन जाता है।

जब प्रथम-प्रथम आप श्री अवध पधारे, तो एक साधारण पथिक के जैसा गली-गली में भ्रमण कर रसरंगमय जीवन व्यतीत करने लगे। नजरबाग के एक मन्दिर में पुजारी पद पर रहते हुए और मन्दिर संचालकों से बिना याचना किये हुए ही जो मिल जाता था उसी में सन्तुष्ट रह कर श्री युगल सरकार को भोग लगाते थे। श्री युगल सरकार के प्रति उनके अगाढ़ प्रेम का फल ही वर्तमान श्री सियहुलसी भवन के रूप में प्रगट हो गया है। मैं जब श्री हनुमान गढ़ी में बारह वर्षों तक श्री रामायण की कथा श्री हनुमान जी को सुनाया करता था। तब श्री पुजारी जी महाराज वहाँ भी कृपा कर पधारते थे और कथा सुनकर प्रेमविभोर हो जाया करते थे। मुझे भी श्री मिथिला रहस्य सुनाकर अपार आनन्द वर्षाते थे। वे सत्संग आश्रम भी स्वयं पधार कर श्री रामनवमी के अन्तिम समय में माला लेकर रसमय बधाई के पद सुनाया करते थे। एक बार श्री रामनवमी बधाई में जब भक्तों के साथ हमारे यहाँ पधारे और बधाई गान करने लगे तो मैंने निछावर करके अचला उन्हें ओढ़ा दिया। उन्होंने भी एक दूसरा पीत अचला यह कहते हुए मुझे ओढ़ा दिया।

'सर्बस दान दीन्ह सब काहू। जेहिं पावा राखा नहिं ताहू' ।।

जहाँ कहीं भी सन्तों के आश्रम में भंडार के अवसर पर पधारते, वे स्वयं सबसे दूर एक ओर बैठ जाते। उनमें ऐसी अमानता की सीमा देखकर सन्त समाज के लोग तो दंग रह जाते थे। प्यारे युगल सरकार के लिये अनेकानेक वस्तु आभूषण की व्यवस्था और अपने लिये एक अकिंचन जैसा साधारण वेषभूषा में सदा ध्यानावस्थित रहना। यही उनका नित्य जीवन बना हुआ था। प्यारे दुलहा-दुलहिन की जोड़ी का विधिवत् शृंगारकर वेदविधि से एवं लोक विधि के साथ-साथ सन्त महान्तों के बीच में श्री विवाहमहोत्सव सम्पन्न करते थे और ज्योनार प्रसाद को सभों का अधिकार समझ मुक्त हस्त से वितरण करते थे। श्री अवध धाम में आपके जैसे भक्त का होना तो अब असम्भव-सा लगता है।

अन्तिम लीला विश्राम काल में जब मैं श्री सियहुलसी भवन पहुँचा तो देखा कि वहाँ श्री नामनवाह का अनुष्ठान आरम्भ हो चुका था। आप लेटे हुए श्री सीताराम नामामृत पान कर रहे थे। जैसे उन्होंने सुना कि रामायणी जी आये हैं वे लोगों के सहारे उठ खड़े हुए और हृदय से लगाते हुए कहने लगे कि अब दया हो रही है, अब आप इन सबों को देखेंगे।

"को बरनै मुख एक तुलसी महिमा सन्त की, जिनके विमल विवेक शेष महेश न कहि सकहि।

विधि हरिहर कवि कोविद बानी, कहत साधु महिमा सकुचानी ।।

श्री १०८ पुजारी जी श्री रामशंकरशरण जी की उदारता

(लेखक—श्रीमती सिया सहचरी, श्री रूपकला संकीर्तन भवन, श्री रूपकला घाट, अयोध्या)

परमाचार्य श्री अनन्त भगवान प्रसाद जी "रूपकला" की सन् १६३२ ई० में साकेत यात्रा के बाद उनके शिष्य श्री महान्त रघुवंश भूषण शरण जी, कीर्तिकला निष्काम, श्री रूपकला कुञ्ज, अयोध्या

में श्री रूपकला जी का वार्षिक भण्डारा शोकमय वातावरण में किया करते थे। एक रात्रि को उन्हें स्व
हुआ कि तुम वार्षिक भण्डारा श्री विवाह लीला के उल्लासमय वातावरण में किया करो। श्री [illegible]
भूषण जी ने अपने स्वप्न का समाचार श्री विवहुती भवन के आचार्य पुजारी श्री रामशंकर शरण जी से
कह सुनाया। उन्होंने सुनते ही उदारता पूर्वक वार्षिक भंडारे के अवसर पर प्रतिवर्ष श्री सीताराम विवाह
उत्सव करने का आश्वासन दिया। तब से श्री रूपकला कुञ्ज में श्री विवाह उत्सव का सुख वे आजीवन
बर्षाते रहे। श्री पुजारी जी महाराज की साकेत यात्रा के बाद वर्तमान महान्त श्री वैजनाथ शरण जी
महाराज भी वैसा ही उदारता पूर्ण व्यवहार कर रहें हैं। इनके द्वारा भी प्रतिवर्ष श्री रूपकला जी के
वार्षिक भंडारा के अवसर पर श्री विवाह उत्सव का सुख श्री रूपकला कुञ्ज में दिया जा रहा है, जिसके
लिये श्री रूपकला आश्रम के निवासी हृदय से कृतज्ञता प्रकाश कर रहे हैं।

—:-:—

श्री पुजारी जी महाराज की प्रेमाराधना

(लेखक—श्री अनन्त महान्त वैदेहीशरण जी महाराज, श्री हनुमन् निवास, अयोध्या)

श्री अवध में, आबाल-वृद्ध-वनिता, ऐसा कौन है, जो श्री अनन्त रामशंकर शरण जी पुजारी जी महाराज को न जानता हो। श्री दुलहिन-दुलहा सरकार के स्वरूप में आपका अटूट अनुराग था। आपका जीवन चारों भ्राताओं एवं चारों बहनों की लीला-छवि पान करने में ही व्यतीत हुआ। लीला स्वरूपों में आपकी एकरसता बनी रही, जिस प्रकार श्री भरतलाल जी का भाव श्रीराम जी के प्रति बना रहा, यथा—

"भरत सुभाव सुशीतलताई, सदा एक रस बरनि न जाई।"

श्री पुजारीजी महाराज के जीवन के अन्तिम भाग में उनके नेत्रों में मोतियाबिन्द हो गया, जिस कारण दृष्टि का अवरोध-सा हो गया था। इस कारण, लीला स्वरूपों के सम्मुख आने पर आप उन्हें स्पर्श करते थे और प्यार से गोद में बैठा लेते थे। ऐसी अवस्था में कई बार प्रेमियों ने उनसे अनुरोध किया कि मोतियाबिन्द के कारण आप लीला स्वरूप भगवान् की छवि को देख नहीं पा रहे हैं, अतएव आप नेत्र का अपरेशन करावें। आपने इसका विलक्षण उत्तर दिया। उन्होंने कहा कि श्री किशोरी जी से प्रार्थना करके ही मैंने अपनी दृष्टि का जगत् दर्शन से अवरोध किया है, उनकी स्वीकृति हो जाने पर ही हमारे नेत्र बन्द हुए हैं। अब मैं इसका विरोध क्यों कर करूँ ? यह उत्तर तो वही दे सकता है जिसकी आन्तरिक अनन्यता भगवान् के साथ वास्तविक रूप में बन गयी हो और उनकी दिव्य झाँकी दिव्य नेत्रों से ओझल न हो। श्री पुजारी जी महाराज तो इस स्तर तक पहुँच चुके थे। इसके बाद उनके सम्बन्ध में आगे कुछ कहना बाकी नहीं रह जाता है। मेरा पूर्ण विश्वास है कि उन्होंने श्री दुलहिन-दुलहा रूप श्री सीताराम जी का सानिध्य प्राप्त कर लिया था। आपका जीवन चरित्र हम सबों के लिये अनुकरणीय है।

हर्ष का विषय है कि उनके स्थानापन्न महान्त श्री वैजनाथ शरणजी, जो एक विद्वान सन्त हैं, श्री पुजारी जी महाराज की अनुरूपता वे अवश्यमेव ही प्राप्त कर रहें हैं। समस्त उत्सव बड़े लगन और उत्साह से मनाये जा रहे हैं। श्री अवध के वैष्णव स्थानों में श्री विवहुती भवन एक मुख्य स्थान है, जिसकी उन्नति प्रतिदिन होती जा रही हैं। प्रभु से मेरी प्रार्थना है कि यह स्थान जैसा हरा भरा है, नित्य इसी भाँति फूलता फलता रहे।

अलम्

श्रद्धाञ्जलि

(लेखक—बालयोगी, लाल "भैया" (एम. ए.), श्री श्याम सदन कुटीर, रामघाट, अयोध्या)

पूज्यपाद श्री रामशंकर शरणजी, परम पुनीत, सरल स्वभाव सन्त थे। मैं उनके चरण-चिन्हों के ऊपर चलकर प्रसन्नता एवं सुखानुभूति लाभ ले रहा हूँ। हम लोगों के समाज में इस महान् विभूति का अभाव सदैव खटकता रहेगा।

अपने प्रेमास्पद को रिझाने की जो सरस प्रणाली वे स्थापित कर गये उसे चिरकाल तक भुलाया नहीं जा सकता। उनके उपकार के हम लोग ऋणी हैं।

जय हो, जय हो, हे विश्व बन्धु ! तुम्हारी जय हो ॥

लघु किंकर, लाल सखा

—:-:—

॥ श्री जानकी वल्लभो विजयते ॥

कर्मयोगी स्वामी श्री रामशंकर शरण जी महाराज

(लेखक—श्रीअवधेशकुमार दास, 'शास्त्री' मंत्री, स्वामी श्रीभगवदाचार्य स्मारक सदन समिति अयोध्या)

यों तो विधि के सृष्टि-वैचित्र्य के अनुसार जन्म और मरण काल-क्रम से अपरिहार्य हैं, किन्तु 'सजातो येन जातेन याक्ति वंश समुन्नतिम्'। वास्तव में उसी का जन्म लेना सार्थक है जिससे देश, धर्म और समाज लाभान्वित हो। जब-जब पृथ्वी पर अधर्म वृद्धि तथा धर्म का ह्रास होता है तब-तब प्रभु अपनी विशेष विभूतियों को धरातल पर भेजकर उनके द्वारा धर्म-प्रचार तथा अधर्म-संहार का कार्य कराते हैं। श्री अवध स्थिति श्री विवहुती भवन साकेत वासी महान्त स्वामी श्री रामशंकर शरण जी महाराज ऐसी ही विशिष्ट विभूतियों में एक थे। दया, सौहार्द, कर्त्तव्य परायणता, प्रभु प्रेम, दान शीलता आदि गुण इनमें कूट-कूटकर भरे थे। भूखे को देखते ही आप तुरन्त भोजन दिलाते थे। उदारता की तो आप प्रतिमूर्ति ही थे। श्रीराम कलेवा के बाद भंडारे के दिन आप की उदारता देखते बनती थी। भंडारा का समाचार मिलते ही श्री अवध में चारों ओर से अनियन्त्रित असंख्य वृद्ध-बाल, नर-नारी भगवत् प्रसाद एवं भेंट पूजा प्राप्त करने हेतु श्री विवहुती भवन पहुँच जाते थे, वर्ष भर में श्री पुजारी जी महाराज जो वस्तु, पात्र, आदि एकत्रित कर पाते थे सबों को दान के रूप में वार्षिक भंडारा के अवसर पर बाँट दिया करते थे।

प्रभु के चतुष्टय विग्रह (नाम, रूप, लील, धाम) में पूर्ण निष्ठा रखते हुए भी प्रेम लीला में आपकी विशेष रुचि थी। श्री विवहुती भवन में प्रति पञ्चमी को श्री विवाह उत्सव मनाया जाता रहा। यों तो श्री सीताराम विवाह उत्सव पहले से भी हुआ करते थे, परन्तु आपके द्वारा श्री विवाह महोत्सव में लोगों को साक्षात् सुख का अनुभव होता था। आपके द्वारा श्री विवाह उत्सव का प्रचार-प्रसार विशेष रूप से हुआ। जिस समय आप आरती सजाकर माथे पर रख पद गाते हुए नृत्य करने लगते थे तो सारा समाज आपकी प्रेम पूरित अवस्था अवलोकनकर प्रेम विभोर हो जाया करता था।

अनेकों पाश्चात्य शिक्षा प्राप्त सरकारी अधिकारी, वकील तथा कर्मचारी आपके शिष्य एवं प्रेमी वर्ग में थे। उत्सव के अवसर पर शीघ्र प्रसाद के लिये लालायित दृष्टि से खड़े रहकर ऐसे अधिकारी वर्ग भी उपयुक्त अवसर की प्रतीक्षा करते रहते थे। यह आपके ही प्रेम का प्रभाव था। साधु, ब्राह्मण, अतिथि अभ्यागत की सेवा करना आपके जीवन का मुख्य ध्येय बना रहा। हम सभी श्री अयोध्यावासियों पर

आपकी विशेष कृपा बनी रहती थी। श्री अवध में श्री विवहुती भवन को आप श्री मिथिला एवं अपने को मिथिलावासी मानते थे। श्री मिथिला जी के नाते ही आपकी दृष्टि में श्री अयोध्यावासियों का परम पूज्य स्थान था। यह विशिष्ट सम्बन्ध श्री अयोध्यावासियों के साथ बराबर बना रहा।

'आत्मा वैजायते पुत्रः' के अनुसार श्री पुजारी जी महाराज के सभी उपरोक्त गुणों के साकार रूप से श्री विवहुती भवन के वर्तमान् महान्त एवं श्री महाराज जी के ही कृपा पात्र श्री वैजनाथ शरण जी विद्यमान हैं। श्री अवध के सभी सन्त, महान्त एवं भक्त जन ऐसा अनुभव कर रहे हैं कि श्री वैजनाथ शरण जी महाराज नवयुवक होते हुए भी एक गम्भीर विशाल स्थान का महान्ती पद पाकर भी निरभिमानी उत्सव प्रिय एवं आडम्बर रहित हैं। प्रभु से प्रार्थना है कि भविष्य में आप अपने श्री गुरुदेव जी के पद-चिन्हों पर चलकर स्थान की मर्यादा को भली-भाँति संरक्षण करने तथा आदर्शमय जीवन बिताने में सफलीभूत होने के लिये इन्हें विशाल सामर्थ्य प्रदान करें।

—:-:—

॥ श्री रामानन्दाचार्याय नमः ॥

सन्त शिरोमणि श्री रामशंकर शरण जी महाराज

(लेखक—ब्रह्मचारी श्री वासुदेवाचार्य, संस्थापक, "विरक्त")

श्री अवध के सुप्रसिद्ध स्थान श्री विवहुती भवन के संस्थापक सन्त शिरोमणि श्री रामशंकर शरणजी महाराज में विशिष्ट सन्त के अशेष लक्षण विद्यमान थे। उपासना में तो आपका प्रमुख स्थान था। श्री राम विवाहोत्सव मनाना और उसका प्रचार-प्रसार करना आपका मुख्य उद्देश्य था। अगहण शुक्ल पंचमी के दिन श्री विवहुती भवन में श्रीराम विवाह का उत्सव देखते ही बनता था। यों तो प्रत्येक मास की पंचमी तिथि को उक्त स्थान में श्रीराम विवाहोत्सव मनाया जाता है, पर श्री अगहण शुक्ल पंचमी के अवसर पर विवाह उत्सव के बाद एक वृहद् भंडारा होता है, जिसमें भेंट, पूजा आदि से सभी को सत्कृत किया जाता है। श्रीराम विवाह मुख्य उद्देश्य होने के कारण ही इस स्थान का नाम श्री विवहुती भवन पड़ा। सन्त शिरोमणि श्री पुजारी जी महाराज को उनके आश्रित सेवक-सती उन्हें भगवान् के समान ही जानते और मानते थे। आप सर्व प्रिय बने रहे। आपके साकेत वासी होने पर आपके उत्तराधिकारी श्री वैजनाथ शरण जी महाराज स्थान की मर्यादा अक्षुण्ण रखते हुए योग्यता पूर्वक कार्य संचालन कर रहे हैं। उक्त स्थान के अभ्युदय की शुभ कामना करते हुए दिवङ्गत श्री अनन्त रामशंकर शरण जी महाराज के श्री चरणों में शतशः प्रणाम है।

—:-:—

॥ श्री जानकी बल्लभो विजयते ॥

एक महान सन्त

(लेखक—श्री जानकी शरण जी महाराज, श्री बधाई भवन अयोध्या)

श्री विवहुती भवन में, हुए एक सन्त महान।
जिनके जीवन चरित्र को, करौं संक्षेप बखान ॥

श्री विवहुती भवन के श्री पुजारी जी महाराज एक उच्च कोटि के सन्त थे। वे पहले नजर बाग के एक पंचायती ठठेरा मन्दिर में निवास कर श्री मन्दिर विहारिणी बिहारी जू की सेवा पुजारी के रूप में करते थे। उनकी प्रधानता विशेष रूप से श्री स्वरूप सरकार के विवाह उत्सव द्वारा प्रगट हुई। कुछ दिन

बाद उन्होंने स्वर्ग द्वार महल्ला में श्री विवहुती भवन का निर्माण किया और वहीं पर श्री युगल सरकार श्री सीताराम जी को स्थापित कर सेवा-पूजा करते रहे। मुख्य सेवा तो विवाह उत्सव के अवसर पर हुआ करती थी। विवाह अवसर पर पद गाते हुए आप विभोर रहा करते थे और आपके भावावेष से श्री सीताराम रूप लीला स्वरूपों में भी वही भावावेश बना रहता था। स्वरूप सरकार के श्रीमुख से जो वचनामृत निकल पड़ता था वह सत्य होकर ही रहता था। लीला स्वरूपों में आपके स्थान में एक लीला स्वरूप श्री सिद्ध किशोरी जी का आवेशावतार सर्वविदित है। अगहण शुक्ल पञ्चमी के प्रधान विवाह-कलेवा के बाद का भंडारा भी अनुपम होता था। प्रसाद पाने के लिये सबको छूट रहती थी। साथ-साथ वस्तु, पात्र एवं द्रव्य भी वितरित किये जाते थे।

इस प्रकार जीवन पयन्त सेवा-पूजा करते हुए उन्होंने अनित्य शरीर का त्याग किया और प्रिया-प्रीतम श्री सीताराम जी की नित्य सेवा में लग गये।

—:-:—

जो कुछ कहा जाय थोड़ा ही है

(लेखक --रामयणी श्री पुरुषोत्तम दास जी, श्री हनुमान बाग, श्री वासुदेव घाट, अयोध्या)

मैं श्री विवहुती भवन में प्रति वर्ष दो बार अवश्य जाता था, एक बार श्री रामनवमी में श्री राम जन्म बधाई के दिन और दूसरा अगहण शुक्ल पंचमी विवाह-कलेवा-भंडारा के अवसर पर। श्री महाराज जी की बोल-चाल, वेष-भूषा, रहन-सहन एवं नित्य आचरण सभी एक महान ग्रन्थ के रूप में थे, मानो शास्त्र-पुराण-वेदों के सार ही उनके आचरण द्वारा विविध रूप में प्रतिलक्षित होते थे। उनके प्रत्येक आचरण को बिना अध्ययन किये उनके आन्तरिक महत्व का प्रकाश मिलना सम्भव नहीं, क्योंकि वे अपने आपको छिपाये रखते थे। उनके आचरणों के द्वारा बराबर शिक्षा मिलती थी। श्री पुजारी जी महाराज के विषय में कोई महान् पुरुष ही विचार कर सकते हैं। उनके सम्बन्ध में जो कुछ भी कहा जाय वह थोड़ा ही है।

भावल आश्रम, जिला चम्पारण, बिहार में थोड़े, काल के लिये श्री पुजारी जी मराराज ने कृपा कर मुझे आन्तरिक सत्संग का लाभ दिया। यों तो उनके सेवक-परिकर सभी बैठे हुए थे, और उन लोगों में से कुछ आज भी वर्तमान होंगे पर, मेरे उनके बीच की रहस्यमयी बातों को केवल श्री महाराज जी और मैं ही समझ पाये। अनेक रहस्यमय विषयों पर बातें हुईं। मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि वे श्री अनन्त रामानन्दाचार्य के प्रतिरूप आचार्य हैं। श्री रामायण रहस्य में प्रवेश करने पर मुझे मालूम पड़ा कि वे साक्षात् श्री गोस्वामी तुलसी दास जी के ही रूप हैं। भक्ति रसों में शृंगार रस पर जब चर्चा हुई तो ऐसा लगा कि साकेत महल वासिनी मानो श्री चन्द्रकला जी तथा श्री चारु शीला जी ही सरकार नर रूप में प्रगट हैं। श्री राम जन्म उत्सव के अवसर पर तो उदारता में अन्न-धन लुटाते हुए श्री दशरथ जी के ऐसा प्रतीत हुए। श्री विवाह-कलेवा-भण्डारा उत्सव में असंख्य लोगों का स्वागत करते हुए और एक-एक को संतुष्ट करते हुए ऐसा मालूम पड़ता था कि साक्षात् श्री जनक राज ही श्री अवध से आये बरातियों की सेवा-पूजा कर रहे हों। श्री नाम जप के रहस्य की जब बातें होतीं थी तो महाराज जी श्री पवन पुत्र हनुमान जी के सरीखे ही मालूम पड़ते थे।

श्री महाराज जी में 'सिद्धाई' के प्रणाम कम नहीं थे। मैंने देखा था कि जब कोई प्रेत-बाधा से ग्रसित होने पर श्री महाराज जी की शरण में आते थे तो वे एक ही मन्त्र "मंगल भवन अमंगल हारी, द्रवहु सो दशरथ अजिर बिहारी" से झारते थे और लोग प्रसन्न होकर घर लौट जाते थे। श्री महाराज जी कहा करते थे कि श्री राम चरित मानस की चौपाइयों में अनेकानेक मन्त्र भरे पड़े हैं जिसका ज्ञान सन्त भगवन्त

की ही कृपा से हो सकता है। सन् १९५६ ई० की श्री राम कलेवा और भण्डार के अवसर पर अधिक संख्या में लोग आ गये, भोजन सामान को देखकर कुछ लोग घबड़ाने लगे,तब श्री महाराज जी स्वयं भंडारा देखने गये। उन्होंने रसोइया लोगों से कहा कि आप निःशंक होकर प्रसाद लोगों को पवावें और स्वयं वे माला लेकरएक स्थान में बैठ ज्योनार के पद गाने लगे, मानों उनके पद में ही जादू-टोना भरा था। इच्छा भर लोगों को पवाने के बाद भी भण्डारा के सामान प्रचुर मात्रा में अवशेष रह गये। सन् १९५८ ई० में भी, मुझे ऐसे ही देखने का अवसर मिला। उस साल मालपूआ कमी की आशङ्का हो रही थी, पर श्री महाराज जी ने कहा कि चार-चार मालपूआ सबों को दिये जाओ, कोई चिन्ता नहीं।

श्री महाराज जी जीवन लीला विसर्जन कर आज भी अन्तरंग लीला रासमण्डल में अपने अन्तरंग पार्षदों के साथ विहर रहे हैं। जो सारगर्भित वाणी मैंने सुनी और जो चरित्र मैंने देखा वह अकथनीय है। "सो सुख जानइ मन अरु काना, नहिं रसना पहिँ जाइ बखाना॥"

पद बन्दना

(लेखक—श्रीलक्ष्मण शरण जी, 'साधक' पुराना श्री हनुमत् सदन, अयोध्या)

श्री शंकर के अवतार श्रीराम शंकर शरण।
बन्दौं बार बार तिनके पद पंकज सदा॥१॥
दुल्हा-दुल्हिन की सुछवि, जिनके जीवन-प्राण।
श्री राम शंकर शरण, ऐसे सन्त महान॥२॥
नित नवल 'नौशे' नयन, जिनके हिये समाय।
तिनको जगत असार था, फिर क्यों देखो जाय॥३॥
सन्तन की महिमा रघुराई, गाई श्री मुख ठीक।
श्री राम शंकर शरण, ऐसे सन्त सुनीक॥४॥
बन्दौं बार बार तिनके चरण सरोज को।
श्री दुलह सरकार जिनके जीवन धन सदा॥५॥
परमार्थ अरु प्रेम की, प्रतिमा परम अनूप।
श्री राम शंकर शरण, पगे सदा रस भूप॥६॥
दुलहा-दुलहिन की छटा, मण्डप व्याह सजाय।
कोहवर बाग विलास करि, लीनो पियहिँ रिझाय॥७॥
मङ्गल निधि सुखमूल, दुलहा-दुलहिन रूप रस।
पीये जगत को भूल, श्री राम शंकर शरण॥८॥
श्री सियाराम मनोहर प्यारी, प्यारे अवध विहारी जी।
जिनको सिद्ध किशोरी कहिबे, दृष्ट हमारी जी॥९॥

ऐसे सुहृद विशाल यश, जिनको चित्त अपारी जी।
मिले रामशङ्कर कृपा, सियकान्ति लता सुखकारी जी ॥१०॥
श्री रामाजी की रीति को, पूरण करी अघाय।
लक्ष्मण शरण राम शंङ्कर ने, लिये सिय पिय अपनाय ॥११॥

श्री अनन्त पुजारी रामशङ्कर शरण जी महाराज ऐसे महान संत प्रगट हुए जिनके दर्शन मात्र से साक्षात् श्री युगल सरकार के दर्शन प्राप्त हो जाते थे। इनकी प्रवल प्रेमाभक्ति ने स्वामिनी सिया जू को लीला स्वरूप 'श्री सिद्ध किशोरी जी' के रूप में श्री विवहुती भवन में प्रगट कर दिया। समस्त अयोध्यावासी सन्त-महात्मा तथा चर-अचर जीवों को प्रगट होकर उन्होंने अपार आनन्द प्रदान किया। श्री सिद्ध किशोरी जी की जीवनी विस्तार रूप से भैया श्री लक्ष्मीनिधि की लेखनी द्वारा श्री वेदान्ती जी महाराज के आश्रम से प्रकाशित हो चुकी है। वही सिद्ध किशोरी जी ने अन्तिम उपदेश के रूप में मुझसे कहा था—

मोहि रक्षक जिय जानिके, करौ सदा सुप्रेम।
जो कबहूँ मुझे भूलिहौं, मैं नहिँ छड़ाब नेम ॥

किसी उपासक से लिये अपनी भक्ति द्वारा अपने इष्टदेव को प्रगट करने के अतिरिक्त उपासना का और दूसरा लक्ष्य क्या रह जाता है। यही तो उपासना की परिणति है जिसकी प्राप्ति श्री पुजारी जी महाराज ने स्थूल शरीरधारी रहते हुए कर ली और हम सबों को भी धन्य बनाया।

श्री किशोरी जी के चरण-कमल चंचरीक पुजारी श्री रामशंकर शरणजी महाराज

(लेखक—महान्त श्री राम प्रताप दास "शास्त्री", बड़ी छावनी, अयोध्या।)

मुझे यह जानकर परमोल्लास हो रहा है कि श्री अनन्त पुजारी श्री राम शङ्कर शरण जी महाराज की गरिमामयी जीवन लीला एक पावन ग्रन्थ के रूप में प्रकाशित होने जा रही है। सचमुच, वे तो शृंगार रस एवं साम्प्रदायिक रहस्यो के पूर्ण ज्ञाता थे। उनकी वाणी सदा प्रिया प्रीतम जू श्री सीता राम जी की प्रेम रहस्य भरी लीलाओं का गान करती रही। वे प्रेम विभोर होकर कभी राघवेन्द्र सरकार से हास्यमय व्यवहार करते,कभी गद्-गद् कंठ होकर प्रेम गीत गाते हुए नृत्य करते और अपने प्रेमाश्रु से प्रियाप्रीतम जू के पद प्रक्षालन करते, यथा—

वाग् गद्गदा द्रवते यस्य चित्तम् रुदत्यभीक्ष्णं हसति क्वचिच्च।
विलज्ज उद्गायति नृत्यते च मद्भक्ति युक्तो भुवनं पुनाति ॥

श्री पुजारी जी महाराज ने उपरोक्त पंक्तियों में निहित प्रेमाचरण अपनी जीवन लीला में पूर्ण रूप से चरितार्थ किया। ऐसे ही महापुरुष अवतरित होकर अपनी पावन लीलाओं से चौदहों भुवन को पवित्र कर देते हैं। आशा है कि श्री पुजारी जी महाराज की जीवन लीला को पुस्तक रूप में साकार होने पर उसके पठन-पाठन से बहुत अंश तक उनके अभाव की क्षति-पूर्त्ति होती रहेगी और भक्ति साधना में लगे हुए लोगों का मार्ग प्रदर्शन भी होता रहेगा।

अकिञ्चनता

(लेखक—महान्त श्री रामाश्रय दास, चौगुरुजी, रामकोट अयोध्या)

आज से लगभग २२ वर्ष पहले में श्री पुजारी जी महाराज की सेवा में कुछ वर्षों तक उनके साथ निवास किया था। श्री अवध वास के अलावे बाहर भ्रमण में भी श्री महाराज जी के साथ जाया करता था। श्री अवध में प्रधान किंकर्य जो मेरे जिम्मे दिया गया था वह था बाजार से ठेले पर लादकर कोठार के लिये सामान लाना, भण्डार तैयार कर आश्रम वासियों को पवाना तथा प्रातः एवं सन्ध्या में नाम धुनि-पद-गान करना। मैंने देखा था कि जब श्री महाराज जी पूर्ण स्वस्थ्य थे तब स्वयं भी ठेले पर सामान रख कर फैजावाद से पैदल लाया करते थे। चिलचिलाती धूप में सारा शरीर स्वेद-कणों से भरा हुआ, अपने अंगों में फटा-चिटा वस्त्र धारण किये हुए और सिर पर एक मैली साफी बाँधे हुए जब वे श्री अयोध्या जी की गलियों से गुजरते थे तो दर्शक, सन्त, महात्मा, प्रेमियों की यह स्वाभाविक इच्छा हो जाती थी कि किसी प्रकार ठेले को सामान के साथ श्री महाराज जी के हाथ से ले लें और श्री विवहुती भवन पहुँचा दें। बार बार लोगों द्वारा आग्रह होने पर भी श्री महाराज जी उत्तर दिया करते थे कि मेरा शरीर भी तो "नौकर बबुआ" का है। इस शरीर से जो किंकर्य मुझे मिला है वह मुझे करने दें और आप जिस कार्य के लिये जहाँ जा रहे हैं अपने किंकर्य में दत्तचित्त होकर लग जाँय। अपने किंकर्य छोड़कर यदि आप मेरा किंकर्य भी छोड़ा देगें तो घाटा दोनों ही को होगा—

"वन्दा मौज न पावहीं, चूक चाकरी माहीं।"

श्री अवध में सबका समय मूल्यवान् है। प्रतिक्षण निर्धारित कार्य में संग्लन रहना यही सबों को उचित है।

श्री महाराज जी की किंकर्य निष्ठा, त्याग एवं वैराग्य महिमा वर्णन करना मेरे लिये असम्भव है। मैंने तो अभी तक ऐसा सन्त ही नहीं देखा। लाखों-लाख की सम्पत्ति प्रति वर्ष लुटाना, अपने फटे-पुराने वस्त्र धारण करना, काठ की थाली में सत्तू घोर कर पीना और काठ के ही गिलास से जल पीना, अपने स्थान में कहीं पर बोरा या कम्बल बिछाकर विश्राम करना, और जमीन पर ही अपना आसन रखना, जहाँ श्री विवाहहोत्सव हो वहाँ भोजन नहीं करना, ये सारी की सारी बातें अनोखी हैं, जिनका रहस्य आज तक पूर्ण रूप से मेरे दिमाग में नहीं आ पाया। वे तो हर प्रकार से ही अकिन्चनता और निरभिमानता के अवतार थे। इन्हीं शब्दों के साथ उनके पावन चरणों में मैं अपनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित करता हूँ।

॥ ऊँ गुं गुरवे नमः ॥
॥ श्री मैथिली रमणो विजयते ॥
॥ श्री मन्मारुत नन्दनाय नमः ॥

श्री अनन्त पुजारी रामशंकर शरण जी महाराज की बहुरूपी प्रतिभा

(लेखक—श्रीसीताशरण जी, श्री चारुशीला बाग, अयोध्या)

श्री सद्गुरु करुणा सदन, मृदुचित परम उदार।
कृपामूर्ति मंजुल मधुर, भक्ति मुक्ति दातार ॥१॥
सन्त चरित्र पीयूष कछु, लिखवाइय करुणेश।
दीजिय अमल प्रकाश हिय, सब समर्थ हृदयेश ॥२॥

जय सद्‌गुरु सर्वस्व मम, जय सियराम उदार।
जय जय सीता शरण प्रिय, श्री अंजनी कुमार ॥३॥

परम श्रद्धेय पूज्य चरण श्री पुजारीजी राम शंकर शरण महाराज जी के पावन जीवन-चरितामृत प्रकाशन के अवसर पर मैं भी अपनी लेखनी को सफल करने हेतु कुछ अपना अनुभव उल्लेखित कर रहा हूँ। सन्त महिमा का वर्णन करना दुस्तर ही नहीं, अत्यन्त असम्भव है। तो भी, 'सफल करन हित आपन बानी, कहिहौं कछुक चरित्र बखानी ॥' श्री महाराज जी ने अपने जीवन काल में श्री लीला बिहारी युगल सरकार के प्रति भक्ति भावना का एक अनुपम आदर्श उपस्थित किया। यद्यपि श्री सीताराम जी की विवाह लीला नित्य सत्य एवं भक्तों को रसानुभूति प्रदायिनी बराबर ही रही है, फिर भी श्री पुजारी महाराज के द्वारा श्री विवाह लीला उत्सव आनन्दवर्धन के दृष्टिकोण से अधिक उत्कर्षतापूर्ण होता था। भारत वर्ष के अनेक नगर, ग्राम एवं स्थलों पर आपके द्वारा श्री विवाह लीला का आयोजन हुआ, जिसमें अनेकानेक नर-नारी रस प्लावित हुए, पत्थर सदृश अनेक मरुस्थल हृदयों में भी आपने भक्ति भावना के रस का संचार किया। अनेक भगवत् विमुख प्रभु के सम्मुख हो गये। आपने अनेकों लीला स्वरूपों को प्रतिष्ठित किया। उनमें से श्री सिद्ध किशोरी जी तथा मन मोहन सरकार, जो आवेशावतार के सच्चे उदाहरण स्वरूप हुए, उनके हृदयहारी मधुर शील, स्वभाव एवं व्यवहार, आचरणों को याद कर भक्तों का हृदय आज भी तड़प उठता है। उन लीला स्वरूपों के लीला काल में तो मानों साकेत सुख धरातल पर ही प्रेमियों को उपलब्ध होता था। श्री सिद्ध किशोरी जी से लाड़-प्यार पाये भावुक भक्त आज भी उनकी कृपानुभूति करते हैं।

श्री महाराज जी की सन्त-सेवा भी अनुपम थी। श्री विवाह उत्सवों में आगत सभी सन्त वृन्द एवं भक्तों को समुचित सम्मान मिलता था। आपका रहन-सहन साधारण तथा बोलना मिलना, भोजन एवं विश्राम सभी अनूठे ढंग के थे। साधु समाज में आमन्त्रित होने पर आप सादा भेष में पीछे आते और सन्त महान्तों के चरण पादुकाओं के निकट ही बैठ जाते। छोटे-बड़े सन्तों को देखते ही दंडवत् करते और साष्ठांग पड़ जाते। आपके स्थान में प्रधान विवाह और वार्षिक भंडारे के अवसर पर जो सन्त एवं दरिद्रनारायण की सेवा होती थी उसकी समानता अन्यत्र नहीं मिलती।

वर्तमान महान्त श्री वैजनाथ शरण जी महाराज भी एक बहुत सरल सन्त हैं और अपने गुरुदेव, श्री अनन्त पुजारी जी महाराज के ही चरण चिन्हों पर चलकर सभी उत्सव अनुराग और प्रेम से उसी भाँति सम्पन्न किया करते हैं। श्री किशोरी जी से प्रार्थना है कि श्री पुजारी जी महाराज की भाँति ही श्री विवहुती भवन में श्री सीताराम विवाह कलेवा उत्सव का सुख सर्वदा सन्तों को मिलता रहे।

—:—

॥ श्रीमते रामानुजाय नमः ॥

सरल सन्त

(लेखक—स्वामी श्री मधुसूदनाचार्य, अशरफी भवन, अयोध्या)

पूज्य श्री राम शंकर शरणजी महाराज की साधुता, श्री सीताराम जी में उनका अविरल अनुराग और व्यवहार में उनकी सरलता अनुपम थी। सन्तों में अहंकार का होना दोष माना गया है, पर आप तो सदा अहंकार शून्य पाये गये। श्री अवध के सरल स्वभाव वाले सन्तों में ये अग्रगण्य माने जाते थे। श्री

सीताराम विवाह उत्सवों के अवसरों पर तो आपके द्वारा निरन्तर रस की वर्षा होती थी और भंडारा के अवसर पर आपके द्वारा सन्त सेवा अपूर्व लगन एवं उत्साह से की जाती थी।

आपके उत्तराधिकारी महान्त श्री बैजनाथ शरण जी से भी यही आशा है कि आप श्री राज जी के सभी कार्यक्रम तथा उनके द्वारा होने वाले कैंकर्यों में अभिवृद्धि करेंगे।

इति शुभम्

—:—

दिव्य विभूति की स्वानुभूति

(लेखक—श्री अनन्त हरिनाम दासजी "वेदान्ती" श्री जानकीघाट, अयोध्या)

"देवानां पूरयोध्या" इत्यादि वेद प्रतिपाद्य एवं अयोध्या, मथुरा, माया, काशी, अवन्तिकापुरी द्वारावती, ज्ञेया, सप्तैता मोक्ष-दायिका" के अनुसार मोक्षप्रद सप्त पुरियों में श्रेष्ठ यथा "अयोध्यापुरी मस्तके" तथा 'अवध धाम धामाधिपति' के अनुसार सम्पूर्ण धामों में श्रेष्ठ, अखिल ब्रह्माण्ड नायक परात्पर प्रभु भगवान् श्री रामजी का प्राकाट्य स्थल श्री अयोध्या धाम के दिव्य विभूति पूज्य चरण पुजारी श्री राम शंकर शरण जी महाराज सन्तों में मुकुटमणि सगुणोपासक प्रेमी भक्तों के परमाराध्य थे, 'मम गुण ग्राम नाम रत गत ममता मद मोह, ताकर सुख सोई जाने परानन्द सन्दोह' श्री रामचरित मानस के इस दोहे के वे प्रतीक थे। वे माधुर्य रस के परमाचार्य थे तथा निरन्तर भावनामय स्वरूप से अन्तरंग एवं बहिरंग प्रभु के मंगलमयी लीलाओं में निमग्न रहा करते थे।

प्रसिद्ध रसिक भक्त शिरोमणि श्री रामाजी महाराज जिन्होंने एक बारात में जाते हुए साधारण दुलहे को देखकर अपने आराध्यदेव श्री रामभद्र जू के नौशे रूप मान उसी प्राकृतिक दुलह भेष में साक्षात् प्रभु का दर्शन प्राप्त किया। इस प्रकार वे श्री रामभद्र जू के दुलह भेष के ही परमोपासक बने रहे। श्री पुजारी जी महाराज भी उनके साहचर्य से प्रभु के रसमय विवाहोत्सव में ही निमग्न रहा करते थे।

श्री पुजारी जी महाराज प्रत्येक मास के दोनों पक्ष की पंचमी को विवाहोत्सव, षष्टी को कलेवा उत्सव और चौथे दिन चौथारी उत्सव किया करते थे। अपने स्थान में उन्होंने चार भाई एवं चार बहन के प्रतीक आठ लीला स्वरूपों को बराबर रखा और बिना शृंगार के भी अष्टयाम सेवा भाव किया करते थे। उन्होंने अपने स्थान का नाम ही विवहुती भवन रखा जो सर्वत्र विख्यात है।

श्री पुजारी जी महाराज जिस समय श्री युगल सरकार के सामने हाथ में झाँझ और सिर पर आरती ले पद गान करते हुए नृत्य करते थे, उस समय आपका हृदय गद्गद हो जाता था। और नेत्रों से आनन्दाश्रु की धारा प्रवाहित होने लगती थी। प्रेम भरे दृश्य को देखकर प्रेमी दर्शकों का हृदय भी पिघल जाता था। श्री पुजारी जी महाराज में श्री रामभद्र जू के ये वाक्य "मम गुण गावत पुलक शरीरा, गद्गद गिरा नयन बह नीरा" अक्षरशः चरितार्थ होते थे। आप द्वारा सेवित एवं पूजित लीला-स्वरूपों के द्वारा अनेक भावुक भक्तों को कई चमत्कार पूर्ण अनुभव हुए और होते ही रहते थे। मैं भी छात्रावस्था में प्रायः सदा आपके स्थान के उत्सवों में सम्मिलित होकर परमानन्द की अनुभूति करता था। १९५० ई० में श्री काशी जी वेदान्त अध्ययन के लिए जाने पर उस सुख से वंचित रहना पड़ा। आपके स्थान के लीला स्वरूपों में एक स्वरूप 'श्री सिद्ध किशोरी जी' के नाम से विख्यात हो गये हैं। उनकी जीवन लीलाओं में अनेकों असंभव, चमत्कार पूर्ण घटनायें सन्त एवं प्रेमियों के बीच हुईं। उन घटाओं का उल्लेख विस्तार पूर्वक चित्रकूट करवी स्थान के भूतपूर्व अधिकारी श्री राम गोपाल दास जी (भैया श्री लक्ष्मीनिधि जी) ने लिखित पुस्तक "सिद्ध किशोरी चरितामृत" में किया है।

आपके महिमा का कौन वर्णन कर सकता है। ऐसे वीतराग परमानुरागी सन्त श्री पुजारी जी महाराज के श्री चरणों में मेरी परम प्रेम पूरित पुष्पांजलि समर्पित है।

—:—

पावन संस्मरण

(लेखक—श्री अनन्त कौशल किशोर शरण जी महाराज हनुमत सदन, अयोध्या जी)

घटनायें नित्य घटती हैं पर कभी-कभी अपना संस्पर्श प्रदान करती हैं। महानता जब ऋजु परिवेश में अवतरित होती है तब संस्पर्श धार्मिकता से परिपूर्ण होता है। यह संस्पर्श स्तभंक एवं गत्यात्मक होता है। आश्चर्य के रूप में स्तंभन और प्रेरणा के रूप में गतिप्रद होता है। आश्चर्य का मूल आधार वैशिष्ट्रिय है और प्रेरणा का सारल्य। यह संस्पर्श संस्मरण में परिवर्तित हो जाता है।

एक दिन मध्यान्ह का समय था। बुभुक्षु एवं प्रसाद प्रेमियों से भरा हुआ श्री हनुमत सदन का प्रांगण। उसी के मध्य व्यक्तित्व रहित वहिर्ज्योति शून्य, अन्तर्ज्योति सम्पन्न एक दूसरे के कन्धे के सहारे चलते हुए एक सन्त का दर्शन हुआ। आते ही उनके मुख से ये स्वर मुखरित हुए "मैं डोम हूँ, क्या श्री महाराज जी के दर्शन नहीं होगें ?" मैं अपरिचित होने के कारण न उनके शब्दों पर ध्यान दिया और न पूछा ही कि आप कौन हैं। यद्यपि मैं कई बार उधर से आया और गया। उन्हें क्या चिन्ता ? वे तो सहज भाव से धूल धूसरित भूमि पर विराज चुके थे। इतने में ही उस स्थान के एक सन्त आ गये और उन्हें जगमोहन में चलने का आग्रह करने लगे। पुनः उन्होंने वही वाक्य दुहराया 'भैया, डोम हूँ, क्या श्री महाराज जी के दर्शन होंगे ?' उक्त सन्त ने निवेदन किया कि श्री महाराज जी पंगत में हैं। इस पर उन्होंने कहा 'श्री रामजी बबुआ का जूठन इस डोम को भी मिलना चाहिये।'

उक्त सन्त ने श्री हनुमत सदन के महाराज जी को पूरी सूचना दे दी तब श्री महाराज जी ने कहा कि उन्हें लिवा लाओं। तदनुसार सन्त जी आग्रह पूर्वक पंगत गृह की ओर लिवा ले गये और वहाँ पहुँचकर भी वे बाहर ही बैठ गये। बैठे-बैठे उन्होंने पूर्व वाक्य को दुहराया "प्रसाद चाहिये सरकार, डोम आया है।" श्री हनुमत सदन के महाराज जी स्वयं स्वागतार्थ आये और अनुरोध किया कि पंगत में पधारिये। स्वर को पहचानते हुए उन्होंने कहा 'क्या सरकार हैं ?' जिस शिष्य ने उन्हें हाथ धरा कर लाया था उसने 'जी हाँ' कहा। इतना सुनते ही वे साष्टांग पड़ गये और कहा 'इसे अपना लीजिये'।

श्री महाराज जी ने अत्यन्त शीघ्रता से उन्हें भूमि से उठा लिया और अन्दर चलने का आग्रह किया जहाँ आसन लगाकर उनके लिए भी प्रसाद रखा गया था। तो भी उन्होंने उत्तर दिया 'नहीं सरकार मैं अन्दर का अधिकारी नहीं हूँ।' बबुआ का प्रसाद बाहर ही दिया जाय, 'मैं डोम हूँ न ?' भीतर जाने के आग्रह को अस्वीकार करते हुए उन्होंने प्रसाद बाहर ही पाया। श्री हनुमत सदन के श्री महाराज जी ने उन्हें प्रसाद पवाते हुए बार-बार कुशल प्रश्न पूछा और उन्होंने उन्हीं की कृपा की दोहाई देते हुए आशीर्वाद की याचना की। प्रसाद पाने के बाद तुरन्त ही अपने स्थान पर प्रस्थान कर गये।

मैं जड़वत् मूक होकर सब कुछ देखता रहा। पश्चात् हमने श्री महाराज जी पूछा "ये सन्त कौन थे ?' 'श्री महाराज जी ने उत्तर दिया क्या तुम नहीं जानते' यही श्री बिवहुती भवन के पुजारी जी महाराज थे।' श्री पुजारी जी महाराज का यश श्रवण तो पहले से ही हो चुका था पर दर्शन कभी नहीं हुआ था। उनका यह सौभाग्य पूर्ण प्रथम एवं अन्तिम साक्षात्कार आज भी मेरे हृदय को उद्वेलित कर आकांक्षित बना देता है 'कबहुँक हौं यहीं रहनि रहौंगो, विगत मान सम शीतल मन' की स्थिति उपलब्ध कर सकूँगा ?

—०—

॥ श्री जानकी बल्लभो विजयते ॥

प्रेमाभक्ति के प्रवर्तक पूज्य श्री रामशंकर शरणजी महाराज की एक पावन संस्मृति

(लेखक—श्री अनन्त स्वामी ब्रह्मानन्दाचार्य एम० ए० व्या० सा० वेदान्ताचार्य श्री वेदान्त दर्शन आश्रम, स्वर्ग द्वार श्री अयोध्या जी)

इस जगत में पामर जीव भी प्रभु के धाम में निवास करता हुआ श्रीमद्भागवत के इस वचन के अनुसार 'मम धामानुसेवनात,' उनके अविरल भक्ति का अधिकारी हो जाता है। यों तो सप्त पुरियों में मूर्धन्या श्री रामभक्ति द्रव स्वरूपा पुण्य सलिला श्री भगवती सरयू के तट पर अवस्थित अनन्तान्त ज्योतिर्ज्यायान् पूर्ण ब्रह्म मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् राम के पावन धाम श्री अवध में भगवत भक्ति भावित सन्तों की परम्परा अनादि काल से चली आ रही हैं, किन्तु पूज्य श्री पुजारी जी महाराज उक्त सन्तों के मणिमाला में अपने भाव, निष्ठा एवं उपासना पद्धति के अद्वितीय सन्त श्री अवध में माने जाते हैं। श्रीमद्भागवत के अनुसार भगवत भागवत गुण गान में ही वाणी की सफलता है। इसी भावना से प्रेरित होकर मैं भी श्री महाराज के प्रति अनुभूत, कतिपय विचार सुमन उनकी सेवा में प्रस्तुत कर रहा हूँ।

श्री अवध धाम निवास करते हुए छात्र जीवन से ही पूज्य चरण के सम्पर्क में आने को हमें अनेक अवसर प्राप्त हुए हैं। एक बार लकरमंडी स्टेशन की एक घटना इस प्रकार की है कि सभी यात्री ट्रेन की प्रतीक्षा में अधीर होकर बार-बार स्टेशन मास्टर से ट्रेन आने का समय की जिज्ञासा कर रहें थे। बहुत प्रयास के बाद भी कुछ पता न चला और स्टेशन मास्टर ने भी निराशा जनक ही उत्तर दिया। अतएव इसी वातावरण में सभी यात्री अपने-अपने स्थान को वापस हो गये। मुझे भी विद्यालय कार्य से टिकरी जाना था। पर मैं भी सभी यात्रियों की नाईं निराश होकर लौटने ही जा रहा था कि मेरी दृष्टि एक किनारे बैठे हुए श्री महाराज जी की ओर गयी। मैंने निकट जाकर उनके चरणों को स्पर्श किया। स्थूल नेत्र के बन्द रहने के कारण मेरे स्वर को पहचान कर उन्होंने बार-बार मेरे चरणों को स्पर्श करने का प्रयास किया और नयनाश्रु बहाते रहे। मैंने उनसे भी श्री अवध लौटने को कहा क्योंकि स्टेशन मास्टर के कथनानुसार आज ट्रेन नहीं आयेगी। इस पर श्री महाराज जी ने मुझसे कहा—"स्वामी जी! आप बैठ जाइये, अभी ट्रेन आयेगी।"

इनकी बातों पर तो मुझे विश्वास नहीं हुआ परन्तु थोड़े समय उनके साथ अन्य वार्ता प्रसङ्ग में बिताये गये। इसी समय "लाइन क्लीयर की घंटी बजने लगी और मैं दौड़कर स्टेशन मास्टर के पास पुनः पूछा। पर उन्होंने इस बार भी पूर्ण आश्वासन नहीं दिया। कुछ ही क्षण के बाद ट्रेन को आते देख रेल कर्मचारी भी आश्चर्य चकित हो गये। सभी श्री महाराज जी के समीप गये और कहा कि बिना पूर्व सूचना के यह ट्रेन कैसे आ गयी। इस पर श्री महाराज जी ने सरल भाव से कहा—"मैं श्री किशोरी जी के कार्य से जब भी जहाँ जाता हूँ, मेरी यात्रा कभी विफल नहीं होती।" उन्हीं के साथ ट्रेन में बैठकर सत्सङ्ग करते हुए मैं भी गन्तव्य स्थान को चला गया।

जिस प्रकार अनन्त गुण सम्पन्न प्रभु के गुणों का वर्णन करना असम्भव है, उसी प्रकार 'जानिय सन्त अनन्त समाना' श्री गोस्वामी जी के इस वाक्य के अनुसार सन्तों का भी यश गान करना असम्भव है। इन्हीं शब्दों के साथ मैं शील, औदार्य एवं अमानिता की प्रतिमूर्ति श्री महाराज जी की सेवा में यह श्रद्धा भावना प्रसून समर्पित करता हूँ।

श्रद्धा सुमन

(लेखक—श्री देवीशरण सिंह, अपर जिला मजिस्ट्रेट, गया)

श्री अनन्त महाराज श्री रामशंकर शरण जी के प्रथम दर्शन का अवसर मुझे मुजफ्फरपुर में सन् १९५७ ई० में प्राप्त हुआ। उस समय मैं संस्थाल परगना जिले के साहेबगञ्ज अनुमण्डल के एस० डी० ओ० पद से हटाकर साधारण डिप्टी मजिस्ट्रेट के ऐसा मुजफ्फरपुर में पद स्थापित किया गया था। मेरे विरुद्ध विभागीय कार्यवाई भी चलाई गयी थी। निर्दोष होते हुए भी मेरी प्रतिष्ठा को गहरा धक्का लगा था मुझसे जूनियर लोग ऊँचे पदों पर हों और मैं एक साधारण पद पर रखा जाऊँ यह असह्य स्थिति निरन्तर मानसिक ग्लानि का कारण बन गया था। मैं पाप-ताप और माया के कुटिल प्रभाव को मिटाने वाली शान्तिमय, सुखद छत्रछाया की खोज में व्याकुल भटकर रहा था। इस घोर संकट की अवस्था में एक दूसरे मजिस्ट्रेट भाई श्री विन्ध्याचल जी ने ढाढ़स दिलाते हुए आश्वाशन दिया कि मैं एक ऐसे सन्त के दर्शन करा दूँगा, जिनकी कृपा से आपको वांछित शान्ति मिल पायेगी। इस समय तक मुझे मुजफ्फरपुर डी० आई० जी० पुलिस कार्यालय के रिटायर्ड बड़ा बाबू श्री रामदेनी सिंह जो उक्त महात्माजी के ही कृपा पात्र थे, से सम्पर्क हो चुका था। उनसे भी श्री महाराज की महिमा सुनने का सुअवसर प्राप्त हुआ था।

अन्ततोगत्वा वह शुभ घड़ी भी आ ही गयी जब श्री महाराज जी के पावन चरणों पर अपने अशांत मस्तक को रखकर सुखद शीतलता का अनुभव हुआ। उनके अशीर्वचनों ने मुझे आश्वस्त एवं निर्भय बना दिया और मेरे अध्यात्मिक सुखों का द्वार भी खुल गया। उक्त अवसर पर मुजफ्फरपुर में श्री रामार्चापूजन एवं श्री सीताराम जी श्री युगल लीला स्वरूप की अनुपम झांकियों का जो सिलसिला लगातार कई दिनों तक चला उसके फलस्वरूप मैं सभी दुःखों को भूल-सा गया।

श्री महाराज जी 'नौशे बनुआ' (श्री दुलहा सरकार) और स्वामिनी श्री सियाजू के परम उपासक थे, सारा समय श्री युगल विवाह कलेवा उत्सवों में बीतता था। इनके द्वारा सम्पन्न श्री विवाह एवं कलेवा उत्सव इतने सरस और साक्षात् हुआ करते थे कि दर्शक वृन्द युग, काल एवं स्थान को भूल सा जाते थे। उन्हें प्रतीत होता था कि वे त्रेतायुग में श्री मिथिलाधिपति श्री जनक महाराज के महलों में श्री विवाह मंडप में बैठे चार बहन चार भाई विवाह विधि देख रहे हैं और सरस श्री विवाह एवं कलेवा पद का गान सुन रहे हैं। मैंने देखा कि नास्तिक और अर्ध आस्तिक लोग भी श्री विवाह की सरसता में सब कुछ भूल जाते थे और श्री जनकपुरवासियों-सा आचरण करने लगते थे। एक अवसर पर श्री महाराज जी ने जब कलेवा के दिन झाल लेकर गद्‌गद कण्ठ से "डोमवा करवरवा छैले ठाढ़े हो लाल" यह पद गाने लगे तो उनके नेत्रों से प्रेमाश्रु की धारा तो बहने ही लगी, पर न जाने क्यों अन्य दर्शकों में भी शायद ही कोई ऐसा बचा जो सिसकियाँ भरते हुए फूट-फूटकर रोते न हों। कैसा अलौकिक प्रेम का जादू था। श्री महाराज जी का, जिसके सम्पर्क में आते ही सब आवेशित होकर प्रेमी बन जाते थे और प्रेमाचरण करने लग जाते थे। ऐसे अवसर पर श्री महाराज जी श्री भक्तवर श्रीरामा जी महाराज के प्रति अपना आभार प्रगट किये बिना नहीं रहते थे। वे कहते थे कि हमें तो श्री रामा जी ने ही कृपा कर जो सिखाया पढ़ाया, उन्हीं की कृपा से कुछ अंश तक उनकी शिक्षा के अनुरूप कुछ आचरण कर पाता हूँ। धन्य हैं हमारे श्री महाराज जी और धन्य थे भक्तवर श्री रामा जी महाराज। श्री महाराज जी का शिष्य न होते हुए भी उन्होंने जो लाड़ प्यार मुझे बराबर दिया वह उनके किसी भी विशिष्ट शिष्यों से मुझे कम नहीं मालूम पड़ा। इसी कारण से आपके प्रति मेरी बराबर गुरुवत् भावना थी और आज भी है।

श्री महाराज जी ने तो निजी जीवन में चमत्कारी घटनाओं को कोई महत्त्व ही नहीं दिया पर हम सांसारिकों के लिये तो ऐसी घटनाओं का जीवन में बड़ा ही महत्त्व होता है। सांसारिक लोग तो सिद्ध सन्तों की ही खोज में रहते हैं और सांसारिक तुच्छ स्वार्थ को फलीभूत होने में सन्तों की सिद्धाई का लाभ उठाते हैं। वस्तुतः सिद्धाई की ही पूजा आज के युगों में होती है। भक्ति प्रेम की सूझ कहाँ ?

श्री महाराज जी की कृपा से मेरे जीवन में एक दो चमत्कारिक घटनायें हुईं और अन्यत्र भी देखने को मिली। अनायास मेरी आपत्ति के मामले हट गये, मैं अपर जिला मजिस्ट्रेट के पद पर आसीन हो गया। मुझे दो पुत्रियाँ थीं, पर एक पुत्र की कामना बराबर हृदय में जोर पकड़ रही थी। श्री महाराज जी की कृपा से एक श्री रामार्चा पूजन के बाद गर्भाधान हुआ और पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई। जन्म के बाद भी एक श्री रामार्चा पूजन किया गया और सारे परिवार में उल्लास की लहर दौड़ गयी।

'गई बहोर गरीब निवाजू', यह विरदावली श्री रामभद्र जू की मेरे सम्बन्ध में चरितार्थ हुई।

एक दूसरी घटना इस प्रकार हुई। श्री महाराज जी एक दिन बैठे हुए थे, उसी समय एक कृपा पात्र ने आकर आर्त्त स्वर से कहा—"महाराज जी! उसने (उनका लड़का) तो कुछ पढ़ा ही नहीं, वह विज्ञान की परीक्षा किस प्रकार पास कर सकेगा। परीक्षा भी कल से ही प्रारम्भ होने वाली है। अब पढ़ने का अवसर ही कहाँ ?" श्री महाराज जी मौन होकर सुन रहे थे और जब भक्त का कहना बन्द हुआ तब उन्होंने छपरा जिले की भाषा में उत्तर दिया।" इनइखे पढ़ले त का भइल। रामजी त पढ़ले बाड़न। इनका से कौन ज्ञान विज्ञान छिपल बा। उन्हें नु लिखिहें। वह विद्यार्थी रामदयालु कालेज, मुजफ्फरपुर का था और श्री महाराज जी का बहुत ही प्रिय था। इनके आदेश से वह परीक्षा में बैठा। परीक्षा फल निकलने पर यह पता चला कि वह अच्छी श्रेणी में सफल हुआ। उसी सन्दर्भ में एक दूसरी घटना अपने परिवार की है। मेरी पुत्री, कुमारी प्रतिमा, गतवर्ष मेडिकल कालेज में प्रवेश हेतु परीक्षा में अनुत्तीर्ण हो गयी, इस वर्ष उसने पुनः परीक्षा दी और उत्तीर्ण होने के लिये रोज सादे कागज पर नाम लिखने लगी। कुछ लोगों ने व्यङ्ग किया कि बिना मन से अध्ययन किये केवल राम नाम लिखने से सफलता सम्भव नहीं। मैंने श्री महाराज जी को याद कर उन्हीं के पूर्व वाक्य को दुहराया—"यह कम पढ़ी है तो क्या हुआ। जिनका नाम रोज लिखती है वे तो सर्व ज्ञान स्वरूप हैं।" दो दिन के बाद ही चमत्कार प्रकट हुआ। अखबारों में कुमारी प्रतिमा का नाम भी सफलता की सूची में छप गया सारे परिवार में आनन्द का समुद्र उमड़ पड़ा और श्री महाराज जी की अहैतुकी कृपा का स्मरण कर रोम-रोम पुलकित हो उठा।

श्री महाराज जी तो सदा अपने असली स्वरूप को छिपाये ही रहते थे, पर एक दिन उन्होंने मुझे रात के स्वप्न में अद्भुत रूप में दर्शन दिया। मैंने देखा कि मुजफ्फरपुर में श्री रामदेनी बाबू के स्वच्छ लिपे पुते आँगन में श्री महाराज जी खड़ाऊँ पर एक ओर से दूसरी ओर जा रहे हैं। आधा आँगन भी पार नहीं कर पाये थे कि सहसा उनके वृद्ध शरीर के स्थान पर तेज पुञ्ज से भरा हुआ लाल शरीर प्रकट हुआ। चाँदनी रात में एक अजीब छटा छिटकने लगी। मुझे विश्वास हुआ कि वे सचमुच में श्री हनुमान रूप ही हैं। सहसा मेरे मुख से निकल पड़ा "लाल देह लाली लसे, अरु धरि लाल लंगूर। वज्र देह दानव दलन, जै जै जै कपिसूर। श्री महाराज जी क्या थे यह कौन कह सकता है। वे ही कृपाकर जनावें तो कुछ जानना सम्भव हो सकता है।

मैं श्री परमानन्द शरण जी (नुन्नू बाबू) का बहुत ही कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने स्वयं गया आकर मेरे हृदय में श्री महाराज जी की पावन स्मृति को जागृत किया और मुझे उनके सम्बन्ध में यशगान करने

का सुअवसर प्रदान किया। जीवन भर भी लिखता जाऊँ तो श्री महाराज जी के चरित्र का अन्त नहीं हो सकता है। श्री महाराज जी तो मेरे हृदय में सुस्थापित हैं और आज भी मेरा योग क्षेम वहन कर रहे हैं। मैं कह ही क्या सकता हूँ पर तो भी थोड़े शब्दों में अपने श्रद्धा सुमन उनके पावन चरणों पर निछावर करता हूँ।

जय महाराज जी सदा जय जय हो।

—::—

॥ श्री सीताराम ॥

श्री गुरुदेव-स्तुति

(लेखक—श्री मदनमोहन प्रसाद सिंह, एडवोकेट, गया)

जै जै जै गुरुदेव, रसिक रस के विस्तारक।
दीन बन्धु के रूप धरे, सेवक निस्तारक ॥१॥
'भवन विहौती' महलि प्रिया, के कुंज उपासिनी।
चन्द्रकला अरु चारु शिला, जू की सहवासिनी ॥२॥
श्रीजनकलली अनुराग रंग, नित नव नव ध्यावै।
दुलहा श्री रघुनाथ लला, कलि कीरति गावै ॥३॥
नाम रसिक सिरताज, मधुर लीला अनुरागी।
हिय दम्पति के ध्यान, जगत से परम विरागी ॥४॥
सब रसिकन सुख देन, व्याह लीला विस्तारयो।
कहुँ मिथिला कहुँ अवध महल, के नेह बखान्यो ॥५॥
रचि रचि मंडप व्याह, लीला दरसायो।
तहँ-तहँ युगल सरूप, सियराम सिधारयो ॥६॥
मिथिला अवध पुनीत नेह, नित नव बरसायो।
रसिक जनन निज देह गेह सुधि सब बिसरायो ॥७॥
धन्य श्री गुरुदेव मोहि, निज जिय अपनायो।
कियो सनाथ अनाथ जानि, भव सिन्धु उबारयो ॥८॥

मैं अपने को अहोभाग्य समझता हूँ कि श्री अनन्त महाराज जी की छपने वाली जीवनी में मुझे भी श्रद्धा के दो शब्द अर्पण करने का शुभ अवसर प्राप्त हुआ है। उनके स्मरण मात्र से आँखें झरने लगती हैं और हृदय मूक बन जाता है। तो भी हृदय के उद्गार तो अर्पण करना ही है।

श्री महाराज जी तो एक स्थित प्रज्ञ सन्त के रूप में प्रकट हुए और सदा ही प्रेम गीत गाये। उनमें सभी ईश्वरीय दिव्यगुण शील, स्नेह, क्षमा, संकोच, दया आदि अवसर-अवसर पर दीख पड़ते थे। एक बार एक गाँव में श्री महाराज जी के साथ जाने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ। उस ग्राम के एक बाग में श्री शिव मन्दिर पर बैठे ग्रामीण जन, बाल, युवा, वृद्ध, श्री महाराज जी से कथा सुन रहे थे।

उसी समय एक शिक्षित युवक हाथ में लाठी लिये आ पड़ा और न जाने क्यों वह उलटा सीधा कहते हुए श्री महाराज जी पर उबल पड़ा। उनके ऊपर तीक्ष्ण शब्द बाण का बौछार किया। सारी जनता आश्चर्य चकित हो गयी। कई लोग तो गुस्से से लाल हो रहे थे, पर बिना श्री महाराज जी से संकेत पाये कर ही क्या सकते थे। मुझे तो श्री परशुराम और श्रीराम संवाद का दृश्य सामने साकार दिखाई पड़ा। हाय रे वह महान आत्मा ? कोई प्रत्युत्तर नहीं। बार-बार क्षमा याचना करते रहे। थोड़ी ही देर में वह दानव मानव बन गया और उसने अपने को श्री महाराज जी के पावन चरणों में आत्म समर्पण कर दिया।

द्वाविमौपुरुषौलोके स्वर्गस्यो परितिष्ठितः।

प्रभुश्च क्षमया युक्तो दारिद्रश्च प्रदान वान्॥

भूले भटके को मार्ग दिखाने वाले रसिक शिरोमणि श्री महाराज जी स्थूल शरीर से आज हमारे बीच नहीं हैं। फिर भी उनकी अमर लीलायें, उनके बहुमूल्य उपदेश, ईश्वरीय प्रेम गाथायें, आज भी हम सबों के लिये प्रेरणा के श्रोत बने हुए हैं। उनके वात्सल्य स्नेह की थपकी का सुख मुझे आज भी याद पड़ता है। अधिक न कहकर इन्हीं शब्दों के साथ मैं श्रद्धाञ्जलि अर्पण करता हूँ।

—:-:—

पावन स्मृति

(लेखक—डा० सत्यनारायण शर्मा, एम० ए० (हिन्दी एवं संस्कृत) पी० एच० डी०, साहित्याचार्य, साहित्य रत्न, प्राध्यापक, एस० के० आर० कालेज, बरबिघा, मुङ्गेर)

श्री महाराज जी के सम्बन्ध में यों तो मुझे बहुत से नेमी प्रेमी एवं सन्त महात्माओं के मुख से अनेकानेक बार यशगान सुनने का सुअवसर मिला था, पर उनके शुभ दर्शन का प्रथम सौभाग्य पटने में सन् १६५६ ई० में हुआ। वे एक प्रेमी के यहाँ श्री सीताराम विवाह उत्सव कराने श्री अवध से श्री मिथिला जा रहे थे। संयोग से मुझे भी इस विवाह उत्सव में सम्मिलित होने का मौका मिला। प्रथम बार जब मुझे श्री सीताराम जी की युगल झाँकी श्री लीला स्वरूप के रूप में देखने का सौभाग्य हुआ तो मधुर झाँकी अवलोकन कर मुझे एक अनिर्वचनीय आनन्द प्राप्त हुआ, जिसकी सुखद अनुभूति आज भी हृदय में संचित है। श्री महाराज जी के दर्शन दुबारा मुझे तब हुए जब वे सन् १६५६ ई० में अखिल भारतीय श्री रूपकला भगवन्नाम संकीर्तन महासम्मेलन में सम्मिलित होने के लिये फतुहा जा रहे थे और बस की प्रतीक्षा में बस स्टैंड पर रुके थे। अपने राम भी प्रोफेसर के पद पर नियुक्ति हेतु बरबिघा जा रहे थे। मैंने लीला स्वरूपों सहित श्री महाराज जी के पावन चरणों पर अपना मस्तक रखा और कार्य सिद्धि के अखण्ड विश्वास से आशीर्वाद युक्त आगे बढ़ा। श्री महाराज जी की कृपा से उस समय से आज तक मैं बरबिघा कालेज में अध्यापन कार्य करता आ रहा हूँ।

गुरु दीक्षा—ऐसे तो नौकरी हो जाने के बाद मैं बराबर श्री अवध आने जाने लगा और श्री विबहुती भवन में ही निवास करता था, पर विधिवत् मेरी दीक्षा नहीं हो पायी थी। मेरे मित्र मुझे दीक्षा के लिये प्रेरित करते थे, पर मैं स्वयं ही अन्यमनस्क रहा। एक बार श्री अवध में श्री भरत जी के साधना स्थल नन्दीग्राम का दर्शन कर मैं श्री अवध लौट रहा था तो मुझे प्रबल आन्तरिक प्रेरणा दीक्षा के लिये उत्पन्न हुई। मैंने दीक्षित होने का अनुरोध श्री महाराज जी से कर ही दिया, पर उत्तर मिला—"मैं बूढ़ा हो गया, आप तो पढ़े लिखे आदमी हैं। श्री अवध में एक-से-एक विद्वान् पंडित और सिद्ध महात्मा पड़े हैं। उन्हीं में से किसी को चुन लीजिये। कहा भी है—"गुरु कीजिये जान के, पानी पीजिये छान के।"

इस उत्तर से मैं निराश तो नहीं हुआ, पर करुणा से भर गया। नयनाश्रु ढलते रहे और मैं श्री महाराज जी के पास से नहीं टला। उन्होंने कृपापूर्वक मुझे दीक्षित कर दिया और तब से लगभग दस वर्ष की अवधि में उनके सानिध्य से जो कुछ प्राप्त हो सका है, संक्षेप में उन्हीं तत्वों की चर्चा कर रहा हूँ।

दैनिक जीवन में व्यावहारिक आचरण क्या हो ?

श्री महाराज जी इस सन्दर्भ में कहा करते थे कि जो श्री सीताराम जी का हो गया उसके मल मूत्र त्याग कर्म, दतवन-स्नान, भोजन, विश्राम आदि जितने भी कार्य जीवन में होते हैं वे सब तो भगवान् के लिये ही होते हैं। सांसारिकों के दृष्टिकोण की चर्चा करते हुए श्री महाराज जी ने कहा कि लोगों की हृदयस्थ भावना बनी रहती है कि "हमरा के लोग अच्छा कहे और कोई कुछ दे।" इसी में सांसारिक लोग रत रहते हैं। एक अवसर पर श्री महाराज जी के एक बड़े प्रेमी अगहण प्रधान विवाह उत्सव के अवसर पर चिन्ताग्रस्त मुद्रा में आये और उनसे निवेदन दिया कि उन्हें दिल्ली में एक आवश्यक कार्य है पर दिल्ली जाने से श्री विवाह सुख छूट जाता है। मैं क्या करूँ ? श्री महाराज जी ने विहँसते हुए छपरे की भाषा में उत्तर दिया—"अपने दिल्ली वाला कमवाँ के देखीं, श्री नौशे बबुआ के सेवा शरीर से ज्यादा मन से होय के चाहीं। अगर अपने दिल्ली जायल जाईं त वहाँ के काम होएवे करी लेकिन मनवा विवाह में लटपटायल रही। यहाँ रह जाय से यकर उलटा हो जाई।" श्री महाराज जी ऐसा समझा कर व्यवहारिक दृष्टि का एक सुन्दरतम उदाहरण प्रस्तुत कर दिया। इसी सन्दर्भ में एक दूसरी घटना भी ज्ञातव्य है। एक प्रेमी का कुछ मोटा रकम जहाज पर छूट गया। उन्होंने सजल नेत्र एवं अवरुद्ध कण्ठ से श्री महाराज जी को सारा वृत्तान्त सुनाया। श्री महाराज जी ने उनकी पीठ थपथपाते हुए कहा—"अपने चिन्ता ना करीं, अपने के बोझा हलका हो गइल। जेकर चीज रहल ह ओकरा के श्री किशोरी जी देलीं।" न्याय प्रियता की एक तीसरी घटना इस प्रसङ्ग में उल्लेखनीय है। श्री महाराज के एक शिष्य उन्हीं के एक आफीसर शिष्य के पास नौकरी के लिये पहुँचे। साक्षात्कार के अवसर पर वे असफल हो रहे थे। आफीसर साहब श्री महाराज जी को ध्यान में रखते हुए अन्याय कर गुरु भाई की ही बहाली कराना चाहते थे। दैवयोग से श्री महाराज जी उनके यहाँ आ पधारे। श्री महाराजी ने आदेश दिया कि जो सफल आवेदक है उसी की बहाली आप करें। भगवान् किससे कौन काम करायेंगे इसका पता तो आपको नहीं है।

श्री अग्रहण प्रधान विवाह उत्सव देखे बिना ही लौटा दिया गया—कुछ वर्ष पूर्व की बात है कि मैं अगहण शुक्ल पंचमी के विवाह में सम्मिलित होने के लिये श्री अवध आ पहुँचा। श्री महाराज जी के सामने ही श्री जनकपुर के श्री मौनी बाबा ने मुझसे नौकरी चाकरी के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त की। उन्होंने तुरन्त कहा कि जहाँ से तुम्हारी जीविका चलती है उस नौकरी के कार्य को छोड़कर तुम श्री विवाह सुख लेने आ गये। आदेश हुआ कि आज ही रात की गाड़ी से वापस चले जाओ। मैंने सजल नेत्रों से श्री महाराज जी की ओर ताका कि शायद वे मुझे रुक जाने का आदेश देंगे। पर उन्होंने भी मौनी बाबा के आदेश का ही समर्थन कर दिया। लाचार, मैं रोता हुआ बरविघा वापस आ गया। आते ही पता चला कि मेरी अनुपस्थिति का अनुचित लाभ उठाकर हमारी नौकरी समाप्त करने का षडयन्त्र किया जा रहा था। अब मैंने समझा कि श्री मौनी बाबा और हमारे श्री गुरुदेव श्री अवध में बैठे हुए ही हमारे विरुद्ध होने वाले कुचक्र को जान गये और मेरे कल्याणार्थ ही मुझे वापस किया गया। धन्य हैं हमारे गुरुदेव जो पल-पल मेरा योगक्षेम बराबर ही करते रहे।

नाम निष्ठा—श्री महाराज की श्री नाम निष्ठा मैंने अपनी आँखों से देखी है। श्री भगवन्नाम

स्मरण करते हुए उनके नेत्रों से अविरल अश्रु धाराओं का प्रवाह मैंने कई बार देखा। मुझे एकान्त में बराबर कहा करते थे कि श्री नाम महाराज के आश्रम में ही प्रतिपल बिताओ और यथा सम्भव नाम जप करते रहो। महाप्रयाण के अवसर पर भी उन्होंने श्री नाम नवाह आरम्भ करा कर ही स्थूल शरीर का त्याग किया। उनके महाप्रयाण की तिथि अगहण शुक्ल द्वितीया थी। लोग सहज भाव से श्री प्रधान विवाहोत्सव देखने आ गये थे और एक ही यात्रा में श्री विवाह सुख और श्री महाराज जी के भंडारे में शामिल होने का सुयोग दोनों को ही श्री महाराज जी ने सुगम बना दिया था।

अनुराग एवं सरलता की पराकाष्ठा—श्री महाराज जी के जीवन की सरलता और सादगी अकथनीय है। बाहरी टीमटाम और तड़क-भड़क का लेश भी उनके जीवन में नहीं था। उनका सारा जीवन रसमय बना हुआ था। वे जहाँ कहीं भी जाते जिस समय झाल लेकर प्रेम विभोर हो भक्ति पूरित कंठ से गायन प्रारम्भ करते थे चाहे श्री विवाह के पद हों, बधाई या झूलन के पद हों अथवा श्री मानस विनय पत्रिका आदि ग्रन्थों की पंक्तियों का गान हो, या पूर्वाचार्यों के रसमय रहस्य भरे पदों को गाना हो, उस समय उनके आत्मनिवेदन एवं कारुण्य देखते ही बनते थे। पदों की सरसता से चतुर्दिक वायुमंडल मधुर स्वरलहरी से मुखरित हो उठता था और सम्पूर्ण वातावरण भक्तिमय बन जाता था। यह तो उनके आन्तरिक भगवत् प्रेम की पराकाष्ठा का ही परिचायक है। श्रीरामचरित्र मानस को श्री महाराज जी साक्षात् श्री भगवान् राम का वाङ्मय अवतार मानते थे और सभी प्रेमियों से श्री रामायणजी को सुन्दर पीत वस्त्र में आवेष्ठित कर आदर पूर्वक पवित्र स्थल में रखने का आदेश देते थे।

इस प्रकार श्री महाराज जी अनेकों सांसारिक जीवों को विषय प्रवाह से दूर कर साधना सम्पन्न एवं श्री भगवत चरणानुरागी बना गये हैं। कितने ही अन्धकार पूर्ण हृदयों में पावन प्रकाश दीप उन्होंने जलाये। परिणामस्वरूप, आज भी उनके आश्रित जन आध्यात्मिक शक्तियों को विकसित करने की दिशा में प्रयत्नशील हैं और आगे बढ़ रहे हैं। श्री महाराज जी का स्थूल शरीर नहीं रहने पर भी उनकी भावमयी दिव्य मूर्ति प्रेमियों के हृदय मन्दिर में आज भी विद्यमान है। उनके उत्तराधिकारी श्री अनन्त बैजनाथ शरण जी महाराज भी अपने गुरुदेव के पदचिन्हों पर चलते हुए हर उत्सवों में श्री अवध से विदाई के अवसर पर पूज्य श्री महाराज जी की पूर्व वाणी को बराबर दुहराते हैं—'सदा रहहुँ पुर आवत जाता'।

—०—

श्री ५ युगल सरकार की जय।
श्री ५ मारुत नन्दन की जय॥

श्री अवध

बहुत से सज्जनों ने इस जीवनी के अन्तर्गत श्री महाराज जी की अनन्त दिव्य लीलाओं तथा अधम उधारण, अशरण शरण इत्यादि गुणों का उल्लेख किया है। श्री महाराज जी के साथ चौबीस वर्षों तक रहने का सौभाग्य प्राप्त होने के कारण मुझे भी अनेकों दिव्य लीलायें देखने को मिलीं। उन सबका वर्णन लेखनी के द्वारा करने में असमर्थ हूँ। सिर्फ एक दो घटनाओं का विवरण दे रहा हूँ।

सन् १९६३ के मार्च मास में मैं श्री महाराजजी के साथ श्री अवध आया और उनके आदेशानुसार टिकरी मन्दिर (जो गोंडा जिले में है तथा श्री विवहुती भवन के अन्तर्गत है) में रहने लगा। एक बार की बात है कि करीब दो ढ़ाई बजे रात में छत पर मैं लेटा हुआ था। चाँदनी चारों ओर फैली हुई थी तथा वातावरण शान्त था। मैं क्या देखता हूँ कि अचानक ही एक स्त्री उस छत पर आकर मुझसे कुछ दूर बैठ गयी। मैं उसको देखते ही भयभीत हो गया क्योंकि वह तीन वर्ष पहले ही अपना शरीर छोड़ चुकी थी।

वह मुजफ्फरपुर जिले के रहुआ गाँव के रघुनन्दन बाबू की बहन हीरावती देवी थी जो मेरे गाँव में ब्याही गयी थी। मेरी चाची लगती थी तथा मुझे अपना पुत्रवत प्यार करती थी। वह बोली—'बेटा ! मैं तुझको खोजते-खोजते यहाँ आयी हूँ। मुझे प्रेत-योनि मिल गयी है। श्री महाराज जी भगवान् के अवतार हैं तथा तुझ पर उनका विशेष स्नेह है। तुम मेरे कल्याण के लिए उनसे प्रार्थना कर दो जिससे मैं इस प्रेत-योनि से मुक्त हो जाऊँ।' मैंने कहा—'अच्छा चाची ! मैं सबेरे श्री अवध जाकर श्री महाराज जी से आपके कल्याण के लिए प्रार्थना करूँगा।' वह बोली कि मैं अधिक देर तक नहीं ठहर सकती अतः जाती हूँ और वह जिस दिशा से आयी थी उसी दिशा को चली गयी। उसके जाने के बाद भय के कारण वहाँ के सन्तों से उसी समय नाम-ध्वनि प्रारम्भ करवा दिया। सबेरे कीर्तन-पूर्ति कराकर गाड़ी से श्री अवध आकर रात की घटना का जिक्र श्री महाराज जी से किया। मैंने कहा कि मैं यही जानता था कि सरकार अन्तर्यामी हैं तथा उच्चकोटि के सन्त हैं लेकिन आपके यथार्थ रूप का ज्ञान इस प्रेतनी ने कराया है। श्री महाराज ने मेरी प्रार्थना को सुनकर कुछ क्षणों के लिए अपनी आँखें बन्द कर लीं। उन्होंने उसका उद्धार कर दिया।

दूसरी घटना तब की है जब श्री महाराज जी अपनी जमात के साथ टिकरी में थे। उन्होंने श्री राम रतन शरण 'भंडारी' जी से कहा कि आप श्री अवध जाकर वहाँ के समाचार ले आवें तथा वहाँ पर जो कुछ हुआ हो उसका योग-क्षेम करके चले आवें। 'श्री भंडारी जी' के जाने के बाद श्री महाराज जी ने मुझसे कहा कि आज रात में 'श्री चन्द्रकला सहचरी' का शरीर छूट गया है। वह साकेत चली गयी। साकेत जाने में श्री गुरु की आवश्यकता होती है।

श्री महाराज जी किसी भी गुप्त लीला को प्रकाश में लाने को मना करते थे। इस प्रकार की अनेकों लीलायें, जब तक मैं उनमें साथ रहा, देखीं। देख सुन और समझकर श्री महाराज जी के पावन चरणों के निकट निवास की अभिलाषा रखकर वर्तमान 'श्री महन्त जी श्री बैजनाथ शरण जी' महाराज के कर कमलों की छात्र-छाया में सुख पूर्वक रहता हूँ।

पाठक गणों से प्रार्थना है कि मुझे आशीर्वाद दें कि सिर्फ श्री महाराज जी के कमलवत चरणों में मेरी अनन्यता बनी रहे।

परमानन्द शरण (नुनु) 'अधिकारी'
स्थान—विश्रहुती भवन
जन्मभूमि—दिलावरपुर
पो० था०—बिदुपुर
जिला—बैशाली (मुजफ्फरपुर)

—:o:—

श्री ५ युगल सरकार की जै।
श्री ५ मारुत नन्दन की जै।
श्री अनन्त गुरुदेव महाराज जी की जै।

श्री अनन्त रामशंकर शरण जी महाराज की बहुमुखी प्रतिभा

(लेखक—श्री रंगलाल चौधरी एडवोकेट, भूतपूर्व विधायक, बिहार विधान सभा, सभापति जिला काँग्रेस समिति एवं मन्त्री, जिला सहकारी बैंक, धनबाद)

(१) प्रथम सम्पर्क

आज बीसों साल हो गये जब विहौती भवन के पूज्य महाराज की के सम्पर्क में मैं पहले-पहल

आया। बड़ी ही सादगी, अभिमान का लेश नहीं, स्नेह और आत्मीयता तो पहले ही मुलाकात में खींच लेती थी। भाषा ठेठ देहाती भोजपुरी, जो उनकी सादगी के अनुकूल तो थी लेकिन उससे विद्वत्ता का अभाव जाहिर होता था। अध्यात्मिकता में क्या स्थिति थी मेरे लिये थाह लगाना कठिन था। कम-से-कम उनके बाहरी आवरण से तो उनकी अलौकिकता का आभास नहीं मिलता था। इसके पहले मेरी संगत कुछ संन्यासी महात्माओं के साथ थी और उनसे कुछ हद तक प्रभावित भी था, कुछ योग विषयक अध्ययन भी था या कम-से-कम उसका अभिमान तो जरूर था। राजनैतिक चमक-दमक भी कुछ मेरे साथ थी।

(२) विशेषता पूर्ण शरणागति

प्रथम दर्शन के बाद महीनों बीत गये। फिर ऐसा निश्चय हुआ कि मुझे किसी महात्मा का आश्रित होना है। इस मार्ग के कुछ साथियों ने मुझे सलाह दी कि विहौती भवन के महाराज जी से मन्त्र ले लें। मेरे मन में द्वन्द्व होता रहा कि और बात तो ठीक है, लेकिन महाराज जी काफी पढ़े-लिखे नहीं हैं। पता नहीं मेरे तर्कों का समाधान कर सकेंगे या नहीं? फिर भी मैं मान गया और प्रस्ताव लेकर अकेले महाराज जी के समक्ष उपस्थित हुआ। प्रस्ताव रखते ही उन्होंने कहा—"वकील साहब, आपके लिये कोई विद्वान गुरु चाहिये। मैं तो अनपढ़ हूँ"। मैं दंग रह गया, मेरे मन की बात उन्होंने कह दी। पुनः सोचा यह संयोग भी हो सकता है। या कोई सिद्धि ही इन्होंने हासिल कर रक्खी हो। पर कोरी सिद्धि मेरे किस काम की? मुझे तो ऐसा गुरु चाहिए जो भगवान् का अत्यन्त दुलरुआ हो। आगे मैंने कोई जोर नहीं दिया, प्रसंग दूसरा चला और मैं फिर कनक-भवन के दर्शन को चला गया।

(३) वहाँ कुछ भाव आया। मैंने बड़े ही मर्मस्पर्शी शब्दों में कनक भवन बिहारिणी-बिहारी जू से कहा "सुना है कि तुम्हारे दरवाजे से कोई खाली हाथ नहीं लौटता, लेकिन मैं तो खाली ही लौट रहा हूँ। मैं अनजान हूँ, तुम्हे सब जानकारी है। मैं भूल कर सकता हूँ। तुम भूलों से परे हो। मेरा तुम्हारा इतने दिनों से लगाव है। क्या ऐन मौके पर मूक दर्शक ही बनकर रह जावोगे?"

(४) शाम को ८।९ बजे मैं धनबाद लौटने के लिये तैयार हुआ और प्रस्थान के पूर्व दण्डवत् के लिये पूज्य महाराज जी के पास गया। उन्हें तब तक बुखार आ गया था, दण्डवत् करते ही वे कँहरते हुए बैठ गये और मेरे हाथ में एक कागज थमा दिया। वह कागज शरणागति का मन्त्र-युक्त था और इस तरह युगल सरकार ने ही गुरु की प्राप्ति करायी जब कि साधारणतः गुरु ही भगवान् की प्राप्ति कराते हैं। 'प्रेम नदिया की सदा बहे उलटी धार'। इस प्रार्थना की बात मैंने श्री महाराजजी से नहीं बतायी और कई साल बाद मैंने श्री महाराज जी से प्रश्न किया 'इस विलक्षण ढंग से मुझे क्यों अपनाया गया' जबाब दिया 'मालिकवा जैसे चाहेगा वैसे ही न करेंगे'।

(५) बहुमुखी प्रतिभा दर्शन

दिन बीतने लगे सम्पर्क बढ़ता गया और उनके ज्ञान-रश्मि से मैं काफी प्रभावित होने लगा। मुझे महाराज जी में एक ही बात मुझे खटकने वाली थी, 'विद्वत्ता का अभाव'। 'सोई जाने जेहि देहु जनाई'। मुझे ऐसा लगने लगा कि कोई भी विषय नहीं है जिस पर श्री महाराज जी का पूरा अधिकार न हो। झा देने में, ईंटा जोड़ाई में, रसोई बनाने में, पद गाने में, झाल से सातों सुरों को निखारने में, बिवा उत्सव, श्री रामार्च्या पूजन और सब काम ही में विलक्षणता थी, कुछ-न-कुछ विशेषता अवश्य थी।

(६) कानून की जानकारी

स्थान के कागज पत्र के बारे में कभी-कभी पूज्य महाराज जी हम से कानूनी राय लेते थे। मैं

मन में भी एक मीठी-सी अनुभूति हो जाती कि चलो कम-से-कम एक सेवा के लायक तो मैं पाया गया। लेकिन कुछ ही दिन के बाद यह धारणा भी काफूर हो गई। एक दिन महाराज जी ने मेरे पास कुछ समस्या रखी और उसमें कानूनी सलाह माँगी। मैं सोचने लगा और जबाब आते-आते भी नहीं आ रहा था। मैंने कहा "महाराज जी, इसके सटीक जबाब के लिये कानून की किताब देखकर मैं धनबाद से लिखकर उत्तर भेज दूँगा।" तब महाराज जी बोल उठे 'यदि ऐसा किया तो क्या राय आपकी ?' मैंने कहा, 'हाँ ठीक यही जबाब है महाराज जी'। बिल्कुल कानून पर आधारित जबाब था। 'मैं तो दंग रह गया और यह विश्वास पुष्ट होता गया कि महाराज जी सिर्फ दिखावे के लिये या मान देने के लिये ही मुझसे सलाह माँगते हैं। कभी-कभी मुझे साथ लेकर एक वृद्ध महात्मा (नाम लिखना जरूरी नहीं हैं) के पास जाते और कहते जरा उनसे भी राय ले लें और वहाँ कहते वकील साहब को इसीलिये साथ लाया हूँ कि काम सब तरह से पक्का हो और मजमून भी बढ़िया बने। ऐसे मौके पर अपने राम को कभी-कभी भीतर-ही-भीतर पसीना छूटता था कि कहीं अपनी पोल न खुल जाय।

(७) योग का ज्ञान

जैसा मैं पहले ही कह चुका हूँ मुझे कतिपय योगियों से कुछ सरोकार था। कुछ उसी तरह की चर्चा श्री महाराज जी से हो रही थी कि श्री महाराज जी ने मुँह खोला और जीभ को भीतर की ओर घुसा लिया और कहा—"यही खेचरी मुद्रा है जिसके द्वारा कहा जाता है कि योगी लोग अमृत-पान करते हैं।' मुझे बड़ा ही आश्चर्य हुआ। मेरी तो ऐसी धारणा थी कि श्री महाराज जी योगादिक क्रिया से बिल्कुल अलग हैं। मैंने झट सवाल किया, तो वे बस वही कोरा दिहाती बन गये। 'हमको, बबुआ कुछो मालूम नहीं है, एगो महात्मा के देखले रही यही से बता देली'। फिर उनके इशारे से मैंने समझा 'जाना चहहि गूढ़ गति जेउ, नाम जीह जपी जानहिँ तेउ'।

(८) तीक्ष्ण बैराग्य, सादा भोजन, सादा पोशाक

यह तो सबों को मालूम है कि श्री महाराजजी अपने परमार्थी जीवन में खाना, कपड़ा और आराम को कभी कोई महत्व नहीं दिया। पूवा, पूरी, तस्मै भी बना है फिर भी मामूली सतुआ, चूड़ा और वह भी राम-रस के साथ भोग लगाते थे और उसी में स्वर्गीय सुख का बखान सुनाते-सुनाते नहीं थकते थे।

एक बार हमारे निवास, धनबाद पहुँचे। हम लोग बालभोग की व्यवस्था कर रहे थे, इतने में उन्होंने कहा—"बालभोग मेरे साथ है और इसलिये उसके खत्म होने के बाद ही आप के घर की वस्तु पाऊँगा।' गठरी खुली, और निकला सतुआ, वह भी मड़ुआ का। मैंने कहा—'यह तो शास्त्र निषिद्ध भोजन है।' उन्होंने कहा—'आपको नहीं न पाना है'। मैंने पूछा—'आप भोग कैसे लगायेंगे ?" उन्होंने भोग लगाते हुए सरकार से कहा—"आप राजकुमार हैं, यह मड़ुआ का सतुआ है, सिर्फ देख लीजिए, खाइयेगा मत'। मुझे हँसी तो आयी लेकिन डर से रोक लिया। श्री महाराज जी पाने लगे। अन्तिम होते-होते मैंने कहा—'प्रसादी भी मिलेगी ?' अन्दर से प्रसादी पाने की लालसा भी हो रही थी। पहले तो उनने थोड़ा नाकर नुकर किया, फिर थोड़ा प्रसाद दिया। प्रसादी में एक विलक्षण स्वाद मिला। कभी हम यह युक्ति उपस्थित करते कि ये पुवे, पूरी, तस्मै भी सरकार के भोग लगाये हुए है, प्रसादी है, तो वे झट थोड़ा-सा लेकर चीख लेते और प्रसादी का आदर दिखा देते। श्री महाराज जी के कथनानुसार आखिर-आखिर में उन्हें दिखाईकम पड़ता था और व्यवहार भी वैसा ही करते थे। कभी-कभी इसका लाभ भी हम उठाने की कोशिश करते थे और चोरी से मैले चद्दर या साफी को साबुन या सोडा से साफ कर चुपके से रख देते थे। वे टोकर पूछते कि इसे साफ किसने किया और उसी पर रूठ जाते और मनाने में एड़ी चोटी एक करनी पड़ती थी। सोने

में भी अधिकतर भूमिशय्या, बहुत हुआ नीचे में पुआल दे दिया, जाड़े के दिनों में। आसन बराबर एक जगह पर कभी नहीं रहा। कुछ दिन बरामदे पर, तो कुछ दिन सीढ़ी घर, तो कुछ दिन परित्यक्त पखाने के समक्ष। उनकी ओर से किसी सुकृति के लिये भी माँगने की रिवाज नहीं थी। वे कहते थे कि 'श्री किशोरी जी का भण्डार तो भरपूर है फिर माँगू क्यों किसी से'।

(९) अकिंचनता और अनन्यता

(क) धनबाद में आश्विन मास नाम नवाह का समय था। श्री महाराज जी ने मेरे निवास के बाहरी बरामदे में भूमिशय्या लगा ली। वहाँ से थोड़ी दूर पर लोग जूता खोलकर अन्दर आते थे। मेरे एक मित्र श्री नीरंजन लाल जी ने श्री महाराज जी पूछा—'महाराज जी, आपका प्रोग्राम क्या है ?' श्री महाराज जी ने जूते की ओर देखते हुये कहा—'बबुआ ऊ जूता से कोई पूछे कि तुम्हारा प्रोग्राम क्या है तो वह क्या बतायेगा ? उसके मालिक का जो प्रोग्राम है, उसका भी वही प्रोग्राम है। वैसी ही हमारी बात समझें'। जबाब से सब लोग सन्न हो गये।

(ख) रात का समय था मुजफ्फरपुर स्टेशन पर ट्रेन से उतरा। मैं और श्री महाराज जी। मैंने एक कुली करना चाहा सामान को ढोने के लिये। श्री महाराज जी ने कुली करने से मुझे रोका। मैंने अपना सामान तो उठा ही लिया और श्री महाराज जी का भी आसन उनके हाथ से लेना चाहा, चाहे ऊपर दिल से ही सही–पर श्री महाराज जी ने रोकते हुए कहा 'वश, वश नहीं तो हम हल्ला कर देंगे कि हमारा सामान कोई छीन रहा है, फिर आप फेरे में पड़ जाइयेगा।'' हमें संकट से निकलने की जगह मिली। तो भी मैंने कहा ''महाराज जी, समधी के घर जा रहे हैं। लोग क्या कहेगे ?'' उन्होंने उत्तर दिया'' रात का वक्त है, कौन देखेगा ?'

(ग) उस वक्त सरयूजी में पुल नहीं हुआ था, उस पार से हम और महाराज जी श्री अवध आ रहे थे। रेल से उतरने के बाद पुनः वही पुराना रवैया। कुली उन्होंने नहीं करने दिया। मेरा सामान मेरे पास, श्री महाराज जी का सामान श्री महाराज जी के पास। श्री महाराज जी ने जिद्द किया कि मैं अपना भी एक सामान उन्हें दे दूँ। मैंने नहीं माना। मेरे एक हाथ में बेग और दूसरे हाथ में बेडिंग थे। सरयूजी की रेत में चले जा रहे थे—गुरु और शिष्य दोनों। थोड़ी देर के बाद आवाज हुई 'वकील साहब अपना एक सामान दे दीजिये।'' मैंने उत्तर दिया, नहीं महाराज जी कुछ दूर और जाकर तो अपने राम की हालत बिगड़ने ही लगी क्योंकि चलते-चलते एक बात और हो गयी थी। शिष्य के जूतों ने बालू पर चलने से जवाब दे दिया था। जूतों में बालू भर गये थे, और वह एक तीसरा सामान बन खड़ा हो गया। हाथ तो मेरे दो ही थे, जूते को पलटता रहा लेकिन हाथ थक गया, और चला भी नहीं जाय। कुछ पीछे भी हो गया। पुनः वही आवाज हुई ''वकील साहब, एक सामान दे दीजिये।'' सारी शक्ति बटोरने के बाद भी इस बार 'ना' नहीं कह सका। मैं चुप रहा। फिर वही आवाज। मुझसे रहा नहीं गया। मैंने परिस्थित खोल दी। फिर बड़ी प्रसन्नता से मेरे सूट केश को उन्होंने जहाज तक ढोया। जहाज घाट पर लगते ही मुझे वही भय घर दबाया लेकिन आश्चर्य यह हुआ कि श्री महाराज जी का एक परिचित व्यक्ति आ गया और उन्होंने मेरा सामान उनके संकेत से उठा लिया। इस तरह श्री महाराज जी ने परस्पर सेवा भाव की एक अनुपम शिक्षा दी।

१० (क) पर कल्याण के लिये अन्तर्यामी-पने का इस्तेमाल

श्रीरामनवमी का अवसर था। श्री महाराज जी रूठ कर बिहौती भवन से बाहर थे। कहाँ थे, किसी को पता नहीं। बड़ी उदासी थी। अनुपस्थिति खटक रही थी। फिर भी

रामनवमी का उत्सव सम्पन्न हुआ। मैं साकेतवासी श्री वैदेही शरण (शर्माजी) के साथ श्री चित्रकूट पहुँचा हम लोगों ने यथाशक्ति सभी प्रधान स्थानों का दर्शन किया। लौटने के बाद पूज्य महाराज जी का दर्शन हुआ। उन्होंने पूछा "श्री चित्रकूट में सभी मुख्य स्थानों का आप लोगों ने दर्शन किया?" मैंने बड़े उल्लास से उत्तर दिया "जी हाँ"। उन्होंने फिर पूछा—"क्या रामशय्या का दर्शन किया?" मैं तो आश्चर्य में डूब गया क्योंकि वही एक स्थान था, जिसकी चर्चा होते हुए भी हम लोग नहीं जा सके थे।

(ख) स्थान बिहौती भवन। कोई उत्सव था। शाम का समय, शौच में जायँ तो धोती भिंगानी पड़ेगी फिर वस्त्र कहाँ सुखाया जाय। शाम को अँधेरा भी कुछ हो ही चला था। अपने पास टार्च भी नहीं था। घर की सुविधायें बरवश याद पड़ गयीं। सोचा जितनी जल्द हो धनबाद लौटना चाहिये। इसके तुरन्त बाद पूज्य महाराज जी के पास गया। उनके पास पहुँचने में जब मैं ५–७ हाथ दूर ही था, मेरी सुनाई में ही श्री महाराज जी श्री रामप्रिया शरण (वकील) से कह रहे थे "तुम क्या सेवा करोगे? तुमसे सीनियर वकील तो घबड़ा रहा है और भागने को सोच रहा है। मैं आश्चर्य में पड़ गया और अपने विचार पर काफी पछताया। इस तरह वे अपने अन्तर्यामीपने का तभी इस्तेमाल करते, जब शिष्यों के कल्याण के लिये आवश्यक होता।

(११) गरीब निवाजी

श्री जनकपुर धाम की बात है। श्री महाराजजी शिष्य वर्ग एवं प्रेमियों के सहित विवाहोत्सव सम्पन्न करने के लिये जनकपुर धाम निवास कर रहे थे। श्री युगल सरकार और परिकर पूज्य मौनी बाबा के मन्दिर में ठहरे थे। मैं कुछ भाईयों के साथ वहाँ से थोड़ी दूर एक दूसरे मन्दिर में श्री महाराज जी के साथ ठहर गया था। एक दिन इसी मन्दिर के पिछवाड़े में श्री महाराज जी प्रातःकाल स्नान के बाद जप कर रहे थे। इसी समय उस मन्दिर के पुजारी श्री महाराज जी के बालभोग के लिये कटोरे में सूखा चिउरा लिये खड़े थे, उधर से सीता की माँ (मेरी पत्नी) सन्तरा आदि कुछ फल को अमनियाँ कर महाराजजी को पवाने को तैयार थी, उसी समय हमारे एक वरिष्ठ गुरु भाई भी महल से प्रसाद लिये हुए महाराजजी को पवाना चाह रहे थे। श्री पुजारी जी की हार्दिक इच्छा थी कि उनका बालभोग श्री महाराजी जी पहले भोग लगाकर ही अन्य लोगों के बाल-भोग को ग्रहण करें। पर हमारे वरिष्ठ गुरु भाई श्री कनक महल के प्रसाद होने के नाते यह चाह रहे थे कि श्री महाराजजी पहले वही प्रसाद पावैं। जैसे ही महाराज जी का जप समाप्त हुआ, श्री महल के प्रसाद लिये हुए भाई ने दण्डवत किया और अपना नाम बताया। श्री महाराजजी ने मुझे पुकार कर पूछा कि "वकील साहब और कौनो के बाल भोग बा?" मैंने सब बता दिया। जिस क्रम से लोग आये थे उसी क्रम से महाराजजी ने बाल-भोग किया। श्री पुजारी जी तो इस कृपामय न्याय से आनन्द में उछलने लगे। न्याय तो दूध-का-दूध पानी-का-पानी हुआ ही, गरीब निवाजी और भाव की परखता बेजोड़ दीख पड़ी।

(१२) नाम, रूप, लीला धाम

पूज्य श्री महाराज जी नाम के तो अनन्य उपासक थे ही। उनके द्वारा रूप की उपासना ने तो स्वयं सिया स्वामिनी जू को "श्री सिद्ध किशोरी जी" के रूप में प्रगट कर दिया था। लीला स्वरूपों के माध्यम से श्री सीताराम जी की लीला बराबर ही हुआ करती थी। श्री अवध धाम का सेवन तो आजन्म ही होता रहा, और अपनी लीला का विसर्जन भी उन्होंने श्री अवध धाम में ही किया।

इस संदर्भ में जनकपुर धाम की ही एक-दो घटनाओं का उल्लेख करना उचित ही होगा। श्री महाराज जी के आश्रित शिष्य और प्रियपात्र सेवाव्रती ही युगल सरकार के रंग में बराबर रँगे रहें यही

चिन्ता श्री महाराज जी के हृदय में बनी रहती थी। इसमें किसी प्रकार की कमी होने से या ठेस लगने से शिष्य को सजा न कर स्वयं अपने को ही श्री महाराज जी दण्डित करते थे। औरों को सुधार करने की यही उनकी अपनी पद्धति थी। एक दिन दो-तीन बजे दिन में रूठ कर विवाह मण्डप से दूर मैदान में वे पड़े हुए थे और पास जाने की किसी की हिम्मत नहीं हो रही थी। एक ओर एक गुरुभाई श्री भगवान कुअँर बैठे महाराजजी की ओर देख रहे थे, तो मैं भी कुछ दूर ही बैठकर किशोरी जी से प्रार्थना कर रहा था। उसी बीच हमारे एक वरिष्ठ गुरुभाई श्री रामयत्न बाबू श्री महाराज जी के निकट गये और उन्हें दंडवत किया। गुरुदेव के पूछने पर उन्होंने अपना नाम बताया और श्री महाराज जी से अनुरोध किया कि यहाँ से चला जाय क्योंकि आस-पास गन्दगी भरी पड़ी है। यह सुनते ही श्री महाराज जी ने बड़े आवेश में कहा "क्या कहा, यह स्थल गन्दा है ? यह तो मिथिला भूमि है" यह कहते श्री महाराज जी जमीन में लोट-पोट करने लगे। सचमुच ही आस-पास शूकर विष्ठा पड़े थे। बात बिगड़ते देख मैं भी निकट आ गया और बोल उठा "वास्तव में यह तो दिव्य भूमि है, इसका कण-कण तरण-तारण है, ऐश्वर्य और माधुर्य एक ही बार बिखेर देता है।' इन बातों से श्री महाराज जी प्रसन्न हो गये और हम लोगों के साथ चले आये।

वहीं की एक और उल्लेखनीय बात है कि जहाँ श्री महाराज जी ठहरे हुए थे वहीं पर एक दिन दो पहर में सभी शिष्य एवं प्रेमियों को महा प्रसाद पाने के लिये आमन्त्रित किया गया। जब सभी पङ्गत पर बैठ गये और प्रसाद दिया जाने लगा तब श्री महाराजजी ने आदेश दिया कि एक बड़े कटोरे में सबों का चरणामृत उतारा जाय। लोगों के "नाकर नूकर" करने पर भी चरणामृत उतारा गया। श्री महाराज जी ने कहा कि "चरणामृत कहाँ है, जरा देखें" जैसे कटोरा उनके हाथ में आया उन्होंने सारा चरणामृत घटा घट पान कर लिया। एक कतरा भी किसी को नहीं मिला। इसी समय महल से महाप्रसाद का एक थाल पुजारी जी का भेजा हुआ आया। प्रसाद आते ही श्री महाराज जी प्रसन्न हो गये और बोल उठे-"देखो भाई मेरा चरणामृत लेना महल से पास हो गया।" तो भी लोगों के हृदय में यह बात खटकती रही कि गुरु शिष्य का चरणामृत लें यह एक अभूतपूर्व बात है। मुझे उनका भाव ऐसा लगा कि जो सेवक-सती मिथिला आये हैं वे धन्य हैं, अतएव उनका चरणामृत लेकर भी अपने को धन्य बनाये।

(१३) जीवन लीला विसर्जन की सूचना

श्री राधा कृष्ण ठाकुर द्वारा जनकपुर धाम में आयोजित १९५० ई० के बसन्त पञ्चमी के अवसर पर विवाह एवं कलेवा उत्सवों में अपार आनन्द की वर्षा हुई। हम लोग वहाँ तीन-चार रोज रहे। जिस दिन विवाह महोत्सव हुआ उस रात को पूज्य महाराज जी ने विवाह मण्डप में ही विश्राम किया। मैं दूसरे मन्दिर में निवास स्थान लौट आया परन्तु चार बजे भोर में पुनः श्री महाराज जी के पास हाजिर हो गया। पूज्य महाराज जी आग ताप रहे थे। लोगों की संख्या क्रमशः ४ से ८-१० हो चुकी थी। उसी समय सत्संग वार्ता करते हुए श्री महाराज जी ने गम्भीर मुद्रा में यह कहा "मैं अब चलना चाहता हूँ किसी को कुछ कहना है" जीवन लीला विसर्जन की सूचना पाकर सभी निस्तब्ध हो गये। बहुत प्रयास के बाद हिम्मत बटोर कर मैंने निवेदन किया "आपके जीवन से अनेकों परमार्थ का काम हो रहा है। जनकपुर धाम में इतने लोग आपकी कृपा से ही उपस्थित होकर आनन्द लूट रहे हैं। ऐसी अवस्था में लीला विसर्जन की बात बहुत ही दुःखद है।" श्री महाराज जी ने उत्तर दिये कि "सभी तो सन्तान, धन, व्यवसाय आदि की माँग हमसे करते हैं। अब परमार्थ की बात कोई कहाँ करता है ? नीशे बबुआ से मिला दीजिये ऐसी माँग कोई नहीं करता है। मेरी दूकान में जो वस्तु है उसका कोई ग्राहक है नहीं, और

जिस वस्तु के लोग ग्राहक है वह वस्तु मेरी दुकान में नहीं है। श्री महाराज जी के इस उत्तर के बाद कोई कुछ न कह सका।

१६७० के ही आश्विन मास में मेरे निवास स्थान धनबाद (रंग महल) में नाम नवाह होना था। कुछ वर्ष पूर्व से ही श्री महाराज जी मेरे धनबाद निवास पर नाम नवाह में सम्मिलत हुआ करते थे। इस वर्ष भूला अवसर पर ही श्री महाराज जी ने यह कह दिया कि वे इस बार धनबाद नहीं जा सकेंगे। मैं तो काँप गया। पुनः उन्होंने कहा कि कोई चिन्ता की बात नहीं है। मैंने मन-ही-मन ऐसा संकल्प लिया है कि भरसक अब श्री अवध से बाहर नहीं जाऊँगा। मैंने यह भी सोच रखा था कि यदि आप नहीं मानेगें तो इस वर्ष आपका नाम नवाह श्री अवध में ही करा दूँगा। तो भी आप धनवाद लौटकर नेमी-प्रेमियों से राय लेकर पत्र लिखेगें। मैंने धनबाद लौटकर वैसा ही किया। सबों की सम्मिलित राय लेकर श्री महाराज जी को धनबाद पधारने का अनुरोध पत्र द्वारा किया। प्रार्थना स्वीकार वे नाम नवाह में सम्मिलित हो गये।

इस वर्ष नाम नवाह की विशेषता यह रही कि अनायास नाम जप में भाग लेने वालों की संख्या बढ़ गयी। अपूर्व सुख सदा मिलता रहा मानों नाम प्रताप साक्षात् प्रकट-सा हो गये। श्री रामा जी महाराज जी लीला भूमि के एक होमियो पैथिक डाक्टर जो धनबाद में दवा खाना चला रहे थे, उन्होंने भी नित नाम जप में भाग लिया। नाम जपते-जपते एक दिन उनके नेत्रों के सामने ऐसी प्रकाश-पुंजमय ज्योति छिटक गयी कि वे वेसुध होकर लोटने लगे। मालूम पड़ा कि उनका शरीर ही छूट जायगा पर श्री महाराज जी का चरणामृत पिलाते ही वे स्वस्थ्य चित्त हो गये।

पूर्व वर्षों में नाम नवाह की अवधि में श्री महाराज जी कहीं नहीं जाते थे पर इस वर्ष उन्होंने एक दिन सभी शिष्यों के घर पाँव पयादे दर्शन देने चल पड़े। मेरी कार लेकर मेरा पुत्र सुरेश उनके पीछे हठ पूर्वक चलने लगा कि श्री महाराज जी गाड़ी पर चले। आगे चलकर श्री महाराज जी ने सुरेश के प्रेम हठ को स्वीकार किया और मोटर पर ही सर्वत्र गये। सबों के घर पूजा आरती हुई और उनके सारे परिवार के एक-एक सदस्य को बुलाकर आशीर्वाद दिया शायद आगे आने वाले महीने में अपने महाप्रयाण की बात को ध्यान रखते हुए ही उन्होंने मिल भेंट कर सब पर कृपा वर्षायी।

(१४) महा प्रयाण मुहूर्त

१६७० के अगहण द्वितीया के एक सप्ताह पूर्व मैं पटना मीटिंग में भाग लेने अपने मोटर से गया था। मीटिंग समाप्त होते ही वहाँ से सबेरे धनबाद के लिये प्रस्थान किया और चालक ने इतनी द्रुत गति से मोटर चलाया कि मैं केवल पाँच घण्टा में ही धनबाद अपने मकान के फाटक पर आ गया जबकि पूर्व में साधारणतया ६–७ घण्टे लग जाया करते थे। एक गुजराती मित्र ठीक फाटक पर हीं मेरी खोज कर रहे थे। उन्होंने बताया कि वे श्री अवध से ही लौटे हैं। वहाँ उन्हें कनक महल में विरहुती भवन निवासिनी एक महिला का दर्शन हुआ जो रोती हुई कुछ पाठ कर रही थी यह जानकर कि वे धनबाद के हैं और वहीं लौट रहे हैं, उस महिला ने उन्हें श्री महाराज जी की सूचना तत्काल मुझे देने का अनुरोध किया। वही सूचना मुझे देने वे आये थे।

मैं रात्रि ट्रेन से ही श्री अवध जाने के लिये स्टेशन गया पर वह गाड़ी अगले दिन ६ बजे तक नहीं आयी। मोटर से चाहा तो चालक बीमार पड़ गया। लाचारी में एक गुरु भाई श्री सरयू शर्मा को दूसरे दिन यह कहकर श्री अवध भेजा कि वे तार से वहाँ का समाचार दें। चार-पाँच दिन बाद एक कार्ड आया कि श्री महाराज जी बीमार हैं, तार देने को मनाकर दिया। लाचार मैं सपरिवार पत्र पाते सन्ध्या

में ट्रेन से रवाना हुआ और दूसरे दिन शरीर भी वापस आया। स्टेशन से आते समय वहीं श्री पशु शर्मा रास्ते में ही मिले और बताया कि श्री महाराज जी कुछ घण्टा पूर्व ही चल बसे। किसी को सूचना न दी जाय ऐसा ही वे चाहते थे।

स्थान पहुँचते ही दर्शन किया। चेहरे पर वही प्रकाश और सजीवता। सन्तों एवं प्रेमियों का जमघट लग गया। अपूर्व शोभा यात्रा निकली मार्ग में सर्वत्र पूजा आरती होते हुए उन्हें श्री सरयूजी की गोद में दे दिया गया। रोता बिलखता जमात वापस आया मैंने पूर्व में भी आना चाहा तो ट्रेन मोटर सभी ने उन्हीं के आदेश का पालन किया। जीवन लीला विसर्जन की तैयारी उनने कई मास पूर्व से की पर अन्त समय इने गिने लोगों को ही दर्शन देना अभीष्ट था। वैसा ही हुआ भी विश्वासपूर्वक प्रार्थना है कि उनका आशीर्वाद हमें आज भी सुलभ है और आगे भी होता रहे। जय महाराज जी।

द्वितीय खण्ड

॥ जयगुरुदेव, जय जय गुरुदेव ॥

सादर गुरु पद ध्यान करि, नख ज्योति चित लाय।
बरणौं गुरुवर विमल यश, ताहि कृपा बल पाय ॥
विद्या बुद्धि विवेक बल, इनमें कछु मोहि नाहिँ।
गुरुवर तेरा आसरा, तव भरोस मन माहिँ ॥
वन्दौं हनुमत के चरण, जे जनजीवन प्राण।
देहु सुमति कछु करि सकौं, गुरुवर के यश गान ॥

जनक सुता जग जननि जानकी। अतिशय प्रिय करुना निधान की ॥
ताके युग पद कमल मनावउँ। जासु कृपा निरमल मति पावउँ ॥
पुनि मन बचन कर्म रघुनायक। चरण कमल बन्दउँ सब लायक ॥
राजिव नयन धरे धनु सायक। भगत विपति भञ्जन सुख दायक ॥

गिरा अर्थ जल बीचि सम, कहियत भिन्न न भिन्न।
बन्दउँ सीता राम पद, जिन्हहिँ परम प्रिय खिन्न ॥

कल्याणानां निधनं कलिमल मथनं पावनं पावनानाम्।
पाथेयं यन्मुमुक्षोः सपदि परपद प्राप्तये प्रस्थितस्य ॥
विश्रामस्थानमेकं कविवर वचसां जीवनं सज्जनानाम्।
बीजं धर्म द्रुमस्य प्रभवतु भवतां भूतये राम नाम ॥

आविर्भाव—बिहार प्रदेश का तिरहुत प्रमंडल एक पुनीत एवं धर्म प्रधान भू भाग रहा है। जिला सारण (छपरा) इस प्रमंडल का प्रमुख अंग है। इस जिले की पुण्यसलिला, गङ्गा, सरयू, एवं नारायणी नदियों के पार्श्ववर्ती क्षेत्रों में अनेकानेक सन्त महात्मा एवं भक्तों का अवतरण होता रहा है। वर्तमान शताब्दी के आरम्भ में ही विश्व विख्यात एवं प्रेमाभक्ति के अवतार श्री भगवान् प्रसाद जी

'रूपकला', भक्तवर श्री रामा जी महाराज, श्री लक्ष्मण किलाधीश, श्री अनन्त रामदेव शरण जी महाराज, परमहंस श्री अलबेला बाबा तथा अनन्त श्री खाकी बाबा प्रभृति महान् सन्तों ने इस क्षेत्र में अवतार ग्रहण कर भारतवर्ष के कोने-कोने में भक्तिभाव एवं श्री हरिनाम यश का प्रचार-प्रसार किया है। सारन जिले के ही सिवान अनुमंडल में सिवान शहर से लगभग छः मील की दूरी पर हसनपुरवा नामक ग्राम अवस्थित है। उस ग्राम में प्रत्येक वर्ग एवं वर्ण का निवास स्थान है, पर उस ग्राम का ब्राह्मण समुदाय बहुत ही सुसंस्कृत, धर्म परायण एवं धार्मिक कृत्यों में अग्रगण्य रहा है।

श्री शिवलग्न पांडेय नामक ब्राह्मण आज से लगभग ९० वर्ष पूर्व उस ग्राम में निवास करते थे। उनकी आर्थिक स्थिति साधारण थी। जीविका उपार्जन के लिये उन्हें उपरोहिती कर्म का भी आधार लेना पड़ता था। श्री शिवलग्न पांडेय चार भाई थे, जिनमें अन्य तीन भाइयों का नाम क्रमशः श्री रामलग्न पाण्डेय, श्री रामसुन्दर पांडेय एवं श्री सीनी पांडेय था। श्री शिवलग्न पांडेय की धर्मपत्नी श्रीमती राम प्यारी देवी बड़ी ही धार्मिक एवं देवपूजक स्वभाव की महिला थीं। विधि का विधान इनके साथ ऐसा कठोर रहा कि इनकी कोख से कई पुत्र-रत्न उत्पन्न होने पर भी पुत्र सुख इन्हें अल्पकाल तक ही मिल पाया। इनके पुत्र एक के बाद एक कालकवलित होते गये। स्वभावतः पुत्र-संतान के अभाव ने माता रामप्यारी देवी एवं पिता श्री शिवलग्न पांडेय को सदा चिन्ताग्रस्त बनाये रखा। कुशल ज्योतिषी एवं पंडितों के द्वारा बतलाये गये जाप-योग एवं पूजा पाठ के अनुष्ठान भी बराबर बिफल होते गये। दम्पत्ति की इस कारुणिक अवस्था से ग्रामवासी भी जब तब विह्वल हो पड़ते थे। सबों ने हृदय से अनुनय-विनय किया कि भगवान् इन्हें कम-से-कम एक दीर्घजीवी पुत्र रत्न प्रदान करें।

उधर हसनपुरवा से दस-बारह मील की दूरी पर ही ग्राम खेड़ाय में पूर्व उल्लिखित भक्तवर श्री रामा जी महाराज का अवतार हो चुका था। उन्होंने अवतरित होकर कई वर्ष पूर्व से ही श्री सीताराम नाम कीर्तन एवं श्री सीताराम विवाह उत्सव का प्रचार-प्रसार अनेकानेक सुदूर क्षेत्रों तक किया था। इनके सफल प्रयास से प्रेमाभक्ति-भाव का जागरण प्रचुर मात्रा में हुआ, परन्तु ये अचानक दमा रोग के शिकार हो गये। इनका निजी स्वास्थ्य उत्तरोत्तर गिरता जा रहा था। स्वभावतः इनके हृदय में रह-रहकर यह चिन्ता हुआ करती थी कि यदि इनके जीवन काल में ही करुणामयी श्री सियास्वामिनी जू एक सुयोग्य उत्तराधिकारी प्रदान करतीं तो उन्हें बड़ा ही सहारा होता और भक्तिभाव का प्रचार लगातार चलता रहता। भक्तवर श्री रामाजी श्री सीताराम जी के विवाहित रूप के उपासक थे और दुलहिन-दुलहा रूप में ही उनका ध्यान किया करते थे। इस जीवन चरित्र के क्रम में आगे आने वाली घटनाओं से इस बात की पुष्टि हो जायगी कि श्री शिवलग्न पांडेय युगल जोड़ी की प्रार्थना के साथ-साथ भक्तवर श्रीरामाजी की हृदयस्थ चिन्ता से भी श्री सिया जू द्रवीभूत हो गयीं। फलतः माता रामप्यारी देवी जी के गर्भ में श्री सिया जू ने अपने ही एक पार्षद को शिशु रूप में प्रकट किया।

सन् १८९३ ई० के आश्विन मास में माता श्री रामप्यारी देवी को गर्भाधान हुआ। इस गर्भाधान के बाद अनेक शुभ लक्षणों का उदय परिवार एवं ग्राम में होने लगा' अन्न की उपज में आशातीत वृद्धि होती गई। ग्राम में आनन्द की एक लहर दौड़ गई। परिवार के दिन भी सुधरने लगे। शत्रुओं ने शत्रुता छोड़ दी और मित्रता का भाव उदय हुआ। परिवार का खोया विभव वापस आने लगा और बिना प्रयास के ही पारिवारिक ऋण का शोध हो गया। पूर्व की घटनाओं से आशंकित होकर माता पिता ने इस बार भी अनेकानेक टोटमा तथा मन्त्र-तन्त्र की शरण ली, मनितायें भी की गई। दम्पत्ति में ऐसा विश्वास बढ़ने लगा कि कोई धार्मिक सन्तान ही गर्भ में आयी है। इस गर्भ में किसी प्रकार का कष्ट नहीं प्रतीत हुआ।

इस प्रकार उधेड़ बुन में दिन बीतते गये और सन १८९४ ई० के ज्येष्ठ मास शुक्ल पक्ष की दसमी तिथि को गंगा अवतरण का दिवस आ गया। रघुवंशी कुल के परम भागवत राजा भगीरथ की तपस्या से अधमाधम जीवों के उद्धार के लिये माता गंगा का अवतरण भू भाग पर इसी दिन हुआ था। लगता है ठीक उसी प्रकार हमारे चरित्र नायक भी पतितोद्धार के लिये ही भक्तिरूपा सुरसरि की नाईं ज्येष्ठ शुक्ल दशमी को ही श्री शिवलग्न पांडेय के शिशु के रूप में अवतरित हुए। जिस प्रकार श्री रामभद्र जू ने तीनों भाइयों के सहित अवतरित होने के लिये चैत्र शुक्ल नवमी का चुनाव किया और श्री सिया स्वामिनी जू ने वैशाख शुक्ल नवमी का चुनाव अपने अवतरण के लिये किया, लगता है ठीक उसी प्रकार श्री सीताराम जू ने अपने एक पार्षद को हमारे चरित्र नायक के रूप में अवतरित होने के लिये ज्येष्ठ शुक्ल दसमी (गंगा दशहरा) को ही उपयुक्त समझा।

तदनुसार, सन् १८९४ ई० ज्येष्ठ शुक्ल दशमी को लगभग ९ बजे दिन का समय आ पहुँचा। आज प्रातःकाल से ही प्रसव के शुभ लक्षण दीख पड़े। सुरक्षित रूप से प्रसव के लिये श्री शिवलग्न पांडेय व्याकुल हो उठे। उनके भाई श्री रामसुन्दर पांडेय डगरिन के घर दौड़ पड़े और तत्काल प्रसव कराने के लिये डगरिन आ गई। इस प्रकार अनुकूल ग्रह-नक्षत्र-वार-बेला में दस बजे दिन में हमारे चरित्रनायक प्रगट हुए। आगत शिशु का गौराङ्गरूप, भव्य ललाट, सुन्दर नेत्र, गोल कपोल, सुडौल बाहु, आकर्षक तथा मनोहारी अंग-प्रत्यंग ने सभी को बरबस मुग्ध कर दिया। शिशु का रुदन सुनकर परिवार एवं ग्राम में चहल-पहल का वातावरण हो गया। घर-घर से यूथ-की-यूथ महिलायें एवं युवतियाँ श्री शिवलग्न पांडेय के आगन में आ पड़ीं। प्रसव मुहूर्त में अकस्मात आकाश का रंग बदला, श्याम मेघ मालाओं ने आकाश में लटककर मानो आनन्द विन्दुओं की वर्षा की। हमारे चरित्रनायक के अवतार के साथ ही वर्षा ऋतु के आगमन की सूचना भी मिली। उस पावन मुहूर्त पर कोकिल, मोर, पपीहा ने भी अपनी हाजिरी लगायी। इस प्रकार "वर्षा ऋतु रघुपति भगति" के भाव चरितार्थ हुए। रह-रहकर आश्चर्य चकित करने वाली विद्युत की चमकक्रर आँखों को चकाचौंध कर रही थी। उस अनुपम वातावरण में ऐसा प्रतीत हो रहा था कि विद्युत मार्ग से ही अलौकिक प्रभावाली यक्ष-किन्नर-गन्धर्व बालायें तथा प्रमदागण इसी चकाचौंध के वातावरण में अवतारी पुरुष के स्वागतार्थ धरातल पर आ पहुँची। चारों ओर आनन्द-ही-आनन्द छा गया। अविर्भाव मुहुर्त पर परिवार एवं ग्रामीणों के मुख से सरस सुरीले सोहिलो एवं बधाई के पद मुखरित हो उठे। जन्म उत्सव सम्बन्धी मङ्गलाचार कई दिन तक होते रहे।

बालपन एवं शिक्षा-दीक्षा—सारे परिवार का जीवन लगभग एक सप्ताह पूर्ण उल्लासमय वातावरण में व्यतीत हुआ। लोक विधि के अनुसार अवतरण के छठे दिन छठी उत्सव और छः महीने के बाद "अन्न परासन खीर चट्टी उत्सव" मनाया गया। बहुत तपस्या एवं पूजा-पाठ के बाद एक पुत्र की प्राप्ति हुई, अतएव उसी भाव का द्योतक हमारे चरित्रनायक का नाम श्री धरीक्षण पांडेय रखा गया। कालान्तर में इनका यह नाम बदलकर श्री रामशंकर पांडेय रखा गया। आगे चलकर यह नाम पूर्णतः चरितार्थ हुआ, क्योंकि इनकी जीवन लीलाओं में भगवान् शंकर सरीखे त्याग-विराग तथा भगवान् राम के अनुरूप तरण-तारण के गुण प्रचुर मात्रा में प्रदर्शित हुए। "हठि-हठि अधम उधारे" वाली उदार वृत्ति का परिचय तो इनके जीवन में डेग-डेग पर मिलता गया। ऐसे उदाहरण भरे पड़े हैं, जिनके आधार पर यह कहा जा सकता है कि जहाँ-तहाँ कीच-काँच में पड़े हुए जीवों को स्वयं खोज-खोजकर इन्होंने शरणा-गति प्रदान की।

बालपन से ही इनमें विलक्षणता देखी गई। माताजी जब इन्हें एक बार दुग्ध पान करा देतीं थीं

तब दोबारा स्वयं आकर जब तक दूध पान नहीं करातीं तब तक बीच की अवधि में शिशु क्रन्दन नहीं सुनाई पड़ता था। जब भी माँ दूध पिलावें तभी ठीक, देर सबेर की कोई चिन्ता शिशु को नहीं सताती थी। "यथा लाभ सन्तोष सदाई" यह दिव्य आचरण, जिससे श्री रामभद्र जू रीझते हैं, हमारे चरित्रनायक में जन्मजात ही था। एक विलक्षणता यह भी कही जाती है कि इनके गौराङ्ग मुख मण्डल से कभी-कभी माता जी को ज्योति-सी निकलती जान पड़ती थी। पाँच साल की अवस्था के ठीक बाद प्राथमिक शिक्षा के लिये इनका नाम ग्राम हरिहाँस की पाठशाला में लिखवाया गया। इसके पश्चात् हथुआ पाठशाला में भी पठन-पाठन कुछ काल तक हुआ। घर से जो भी सामान इन्हें खाने-पीने को दिये जाते थे उसे अक्सर वे अपने सहपाठियों में बाँट दिया करते थे। इस कारण एक मास का सामान एक ही सप्ताह में समाप्त हो जाता था। इनके इस स्वभाव से इनके अभिभावक तङ्ग आ जाते थे, किन्तु इनका यह सन्त स्वभाव न छूटा और न किसी प्रकार का अभाव ही हो पाया। कल के लिये संग्रह न करना और "वसुधैव कुटुम्बकम्" वाली सन्त वृत्तियाँ बालपन से ही इनमें देखी गयीं। एक और विलक्षणता बालपन में देखी गई। जब कभी इनकी माता इन्हें लेकर अन्य घरों में जातीं तो उस परिवार के लोग बालक को खाने के लिये मिठाई आदि देते थे। पर उन वस्तुओं को हमारे चरित्रनायक स्पर्श तक नहीं करते थे। एक बार जो घर में इन्हें मिल जाता वही इनके लिये पर्याप्त था और पुनः घर लौट आने पर ही ये भोजन करते। इस प्रकार कुछ काल बाल लीला में बीत गये।

आठ साल की अवस्था में ही इनके पिताजी का शरीर सन् १९०२ ई० में छूट गया और माता श्रीमती रामप्यारी देवी जी का भी देहान्त सन् १९०४ ई० में हो गया, जब कि हमारे चरित्रनायक की अवस्था केवल दस साल की थी। देखने वालों का कहना है कि इन दुर्घटनाओं से ये जरा भी विचलित नहीं हुए। इनमें किसी से आशक्ति अथवा ममता बालपन से ही नहीं पायी गयी। अब इनके लालन-पालन का भार इनके छोटे चाचा श्री रामसुन्दर पांडेय के ही कन्धों पर आ पड़ा। इनकी एक ही बहन श्रीमती अँजोरी देवी अभी तक जीवित हैं, जिनके एकमात्र पुत्र श्री बैजनाथ शरण जी हुए। सम्प्रति यही श्री बैजनाथ शरण जी हमारे चरित्रनायक के शरीर छोड़ने के बाद सर्व सम्मति से विवहुती भवन के महान्त प्रतिष्ठित होकर अपने गुरुदेव (हमारे चरित्रनायक) की उपासना परम्परा का संचालन सुचारु रूप से कर रहे हैं।

संस्कृत भाषा की पढ़ाई प्राचीन पद्धति के अनुसार छपरा निवासी श्री रघुनाथ लाल के घर रहकर छपरे में ही हुई। चौदह पन्द्रह साल की अवस्था में ही हमारे चरित्रनायक की शिक्षा दीक्षा समाप्त हो गई। "अल्पकाल विद्या सब पाई" एक साल की घटना ऐसी है कि जब ये छपरा में ही थे, इन्हें सूचना मिली कि हसनपुरवा में प्लेग की महामारी का आक्रमण हो गया है। घर आने पर उन्होंने पाया कि उनकी बालिका बहन श्रीमती अँजोरी देवी को प्लेग की गिल्टी हो चुकी है। उनकी जान बचाने के लिये हमारे चरित्रनायक कभी उन्हें कन्धों पर, कभी टमटम पर और कभी पैदल लेकर निकटतम कुटुम्बियों के यहाँ तीन चार स्थलों पर गये, पर सबों ने एक ही उत्तर दिया कि "ऐसा वायना लेकर हमारे यहाँ क्यों आये" किसी ने जल पीने तक का भी पुछार नहीं किया। ऐसी अवस्था में अपनी बहन को लिये हुए वे अपने ग्राम वापस आ गये और ग्राम के बाहर एक गाछ के नीचे क्षुधा-पिपासा से व्याकुल होकर बैठ गये। इस घटना ने यह साबित कर दिया कि "बने-बने का सब कोई साथी, बिगड़ी का भगवान् है।" भगवत्कृपा से अकस्मात् गिल्टी का लोप हो गया और बहन चंगी हो गई। खाद्य सामग्रियों को लाने के लिये जब वे अपने घर में गये तब उन्होंने देखा कि अधिकतर सामान चोर चुरा ले गये। निराश होकर लौटने पर

भगवान् भरोसे गाछ के नीचे ही बैठ गये। अनजान लोगों के द्वारा ही फूस की झोपड़ी बन गयी और खाने रहने की व्यवस्था भी हो गई। अल्पकाल में ही प्लेग की महामारी जाती रही और वे घर सकुशल लौट आये। कुटुम्बियों के व्यवहार से भी संसार के प्रति वैराग्य की भावना दृढ़तर हो गई और अनायास विपत्ति में सहायता पाकर भगवान् से अनुराग की भावना बढ़ती गई।

आध्यात्मिक जीवन का विकास:—"होनहार बिरवान के होत चीकने पात" इस कहावत के अनुसार हमारे चरित्रनायक के भी भावी जीवन का आभास बालपन से ही मिलने लगा। कई दिव्य गुणों का उदय तो अल्पावस्था में ही हो गया और पूजा पाठ की ओर भी हमारे चरित्रनायक की अभिरुचि सात-आठ साल की अवस्था से ही बढ़ती गयी। हसनपुरवा ग्राम से लगभग आठ मील की दूरी पर पुण्य सलिला श्री सरयू तट से कुछ इधर ही "महेन्द्रा बाबा" नामक भगवान् शंकर का विख्यात स्थान है। हमारे चरित्रनायक प्रतिदिन इसी मन्दिर में प्रातःकाल उठकर चले जाते थे और वहाँ पूजा-पाठ समाप्त कर लगभग बारह बजे दिन में अपने घर वापस आते थे। इस प्रकार एकान्त पूजा-पाठ का अभ्यास बढ़ता ही गया। कहा जाता है कि एकान्त अवसर पर अज्ञात सन्तों का भी आवागमन इनके पास पाया गया, पर ग्रामवासियों को यह पता नहीं चला कि कौन सन्त किधर से आये और किधर को गये। कोई कुलीन ब्राह्मण ही इनके कुलगुरु थे। शायद उन्हीं से इन्हें "शंकर मन्त्र" मिल चुका था। इनके समान भगवान् शंकर का पुजारी उस समय परिवार या ग्राम में कोई नहीं पाया गया। "इन्ह सम काहुँ न शिव अवराधे" इनके जीवन में चरितार्थ हुआ और आगे चलकर शिवपूजन के फलस्वरूप ही श्री सीताराम जी की विमल भक्ति इनके हृदय में विकसित होती गई। विप्रपूजा एवं गोपूजा भी इनके दैनिक जीवन का प्रधान अंग रहा। अपने मित्र श्री गुलजार पांडेय के साथ स्वयं खेतों में जाकर घास काट लाते और गायों को खिलाते थे। श्री रामचरितमानस का ये नित्य पाठ करते रहे और हसनपुरवा ग्राम में इन्होंने श्री रामायण गान मण्डली की भी स्थापना की। रामायण मण्डली की साप्ताहिक बैठक हुआ करती थी। ग्राम-ग्राम में जाकर रामायण मण्डली द्वारा रामायण पठन-पाठन का भी प्रचार होता रहा।

शुभ विवाह:—अपने चाचा रामसुन्दर पांडेय के प्रति हमारे चरित्र नायक की पितृवत् भावना थी। जब ये चौदह साल के हुए तभी से विवाह का प्रस्ताव लेकर अनेकों लोग इनके चाचा के पास आने लगे। हमारे चरित्रनायक की स्वीकृति प्राप्त करने के लिये इनके चाचाजी ने इन्हें परिवार के अन्य लोगों से कहलवाया। हमारे चरित्रनायक अपने विवाह के पक्ष में नहीं थे, पर बार-बार आग्रह किये जाने पर इन्होंने कहा कि चाचाजी की आज्ञा का उल्लङ्घन नहीं किया जायगा। तदनुसार, इनका शुभ विवाह बसन्तपुर थाने के ग्राम आज्ञा महन्दा निवासी पंडित श्री शोभन पांडेय जी की सौभाग्यवती कन्या श्रीमती जानकी देवी के साथ सन् १९०९ ई० में पन्द्रह साल की अवस्था में सम्पन्न हो गया। विवाह के बाद हमारे चरित्रनायक की धर्म पत्नी मायके में ही सात साल तक रह गयीं। इधर विवाह होने के एक साल बाद ही अपने कई साथियों के साथ हमारे चरित्रनायक ने चारों धाम की तीर्थ यात्रा पूरी कर ली। कहीं कहीं तो पैदल भी गये। अपने पितरों की सुगति के लिये इन्होंने गया श्राद्ध भी सम्पन्न किया।

उधर भक्तवर श्री रामाजी महाराज हमारे चरित्रनायक से मिलने के संयोग की खोज में थे। इनकी पूर्ति गोपालपुर ग्राम के श्री नृपति मिश्र एवं श्री जगदेव मिश्र ने की। सन् १९१२ ई० में आठ का दिन था। श्री मिश्र जी के घर पर श्री भागवत कथा का आयोजन किया गया। उस अवसर पर हसनपुरवा रामायण मण्डली को भी आमन्त्रित कर दिया गया, जिसके प्रधान हमारे चरित्रनायक ही थे। भागवत

श्री श्री १०८ श्री अलबेला बाबा

प्रेरणावश श्री मिश्र जी ने भक्तवर श्रीरामाजी महाराज को भी आमन्त्रित कर दिया। वे भी आ पधारे। रामायण गान को भक्तवर श्री रामाजी महाराज बड़े प्रेम से सुनते रहे और वे बहुत ही मुग्ध हो गये। भक्तवर श्री रामाजी का हरिकीर्तन इतना सरस एवं प्रभावकारी हुआ कि हमारे चरित्रनायक भी बरबश मुग्ध हो गये। इस प्रथम मिलन में ही दोनों एक दूसरे की ओर खिंच गये। भक्तवर श्रीरामाजी ने तो अपने कीर्तन के बीच में ही कई बार हमारे चरित्रनायक की ओर संकेत करते हुए जोरदार शब्दों में कहा "देखिये हमारे नौशे बबुआ (दुलहा सरकार) लाल रजाई ओढ़कर वहाँ बैठे हैं" इन शब्दों के मर्म को पूरी तरह से हमारे चरित्रनायक ने ही समझा। पर, उपस्थित लोगों को भी हमारे चरित्रनायक के परिचय का आभास कुछ हद तक मिल ही गया। इस मिलन में ही भक्तवर श्रीरामाजी ने अपने उत्तराधिकारी को पहचान लिया और उस दिन से अधिकतर उनकी ओर खिंचते गये।

पुनः दो साल बाद सन् १९१४ में सहुली ग्राम के श्री बलदेवप्रसाद के घर पर भक्तवर श्री रामाजी का हरि-कीर्तन-गान चल रहा था। उसी समय ग्राम नौरङ्गाबारी में हसनपुरवा रामायण मण्डली द्वारा रामायण गान किया जा रहा था। यहाँ के श्री विरजा जी ने सहुली जाकर श्री भक्त जी को अपने यहाँ आने के लिये आमन्त्रित कर किया। भक्तवर श्री रामाजी कुछ अँधेरा होने पर उस ग्राम में पधारे। जहाँ पर रामायण गान हो रहा था उसी के सामने एक पीपल गाछ के नीचे छिपकर रामायण गान सुनते रहे। जैसे ही रामायण गान समाप्त होने को था, साँवला रूपधारी भक्तवर श्री रामाजी अचानक वहाँ ऐसे प्रगट हो गये मानो श्री यमुना जी की श्यामधारा ने ही प्रगट हो आनन्द वर्षा कर सबों को रसमय कर दिया।

पूर्व पंक्तियों में यह संकेत किया जा चुका है कि हमारे चरित्रनायक करुणामयी स्वामिनी श्री सिया जू के नित्य पार्षदों में ही एक थे। वे श्री सिया जू की कृपा से ही अधम उद्धारण हेतु तथा भक्त भगवान् की रहस्यमय लीलाओं का दिग्दर्शन कराने के लिये नररूप में अवतरित हुए। स्वयं सिद्ध और हर प्रकार से पूर्ण काम होते हुए भी आपकी जीवन लीला उसी प्रकार से होती गयी जिस प्रकार अन्य अवतारी पुरुषों एवं सन्त-महात्माओं की पूर्वकाल में हुई है। इस मर्यादा लोक में सभी समर्थ पुरुषों ने निमित्त की ओट लेकर ही अपनी लीला को प्रगट किया है। आवश्यकतानुसार किसी को अपना पिता, गुरु या आचार्य बनाया और कार्य कारणवश अन्य विभूतियों को भी अपने पथ-प्रदर्शक या आचार्य जैसी मान्यता दी। भगवान् राम की ही नर लीला का अवलोकन किया जाय तो उनके लीला प्रधान जीवन में यह बात स्पष्ट पायी जाती है कि स्वयं समर्थ परमात्मा होते हुए भी लीलावश उन्होंने अपने गुरु सन्त, विप्र एवं भक्तों को अपने से अधिक मान देकर अपने जन का पथ प्रदर्शन किया है। दुनियाँ को उनकी ईश्वरता में भ्रम न होने पावे, इसीलिये श्रीरामचरितमानस के आचार्य गोस्वामी सन्त तुलसीदास जी ने श्रीरामायण की चौपाइयों में स्थल-स्थल पर उनके मूलरूप की ओर संकेत किया है। लीला में अनेक भावों एवं मानवीय आदर्शों का दिग्दर्शन कराने हेतु ही उन्होंने सन्त महात्मा एवं भक्तों को अपने से बड़ा बनाकर माता-पिता गुरु आचार्य आदि की मर्यादा स्थापित की है। यथा श्री जनकपुर के मखशाला के अवलोकन के प्रसङ्ग में निम्नलिखित चौपाइयों की ओर ध्यान देने से उनके रहस्यमय जीवन का दिग्दर्शन प्राप्त हो जायगा।

राम देखावहिँ अनुजहिँ रचना। कहि मृदु मधुर मनोहर बचना॥
लव निमेष महँ भुवन निकाया। रचइ जासु अनुशासन माया॥
भगति हेतु सोइ दीन दयाला। चितवत चकित धनुष मखशाला॥

कौतुक देखि चले गुरु पाही। जानि विलम्ब त्रास मन माहीं॥
जासु त्रास डर कहुँ डर होई। भजन प्रभाव देखावत सोई॥

स्वयं विश्व रचयिता होते हुए भी मखशाला रचना की प्रशंसा करना अथवा जाने में विलम्ब होने के कारण गुरु विश्वामित्र से भय करना अपनी लीला को सफल बनाने हेतु ही आवश्यक हुआ। हमारे चरित्रनायक की 'जीवन लीला' भी भगवान् राम की लीला के अनुरूप ही उन्हीं के पद चिन्हों पर चलकर आगे प्रदर्शित हुई है। अनुकूल से ही प्रीति होती है। अतएव, जो भी समर्थ पुरुष लीला में आये उनने अपने आन्तरिक भावों के अनुकूल ही अपने आचार्य या पथ-प्रदर्शक का चुनाव किया, अथवा उनके आन्तरिक भाव के अनुकूल ही स्वयं भगवत्कृपा से उनके पथ-प्रदर्शक या आचार्य उनसे आकर मिले। इन्हीं मूल-भूत कारणों से प्रेरित होकर हमारे चरित्रनायक ने बाल्यावस्था से ही अपनी आन्तरिक भावना के अनुकूल पाकर भक्तवर श्रीरामा जी महाराज को भक्ति-उपासना मार्ग में अपना पथ-प्रदर्शक मानने लगे और उनके सुझाओं का आदर करने लगे। वे तो सदा कहा करते थे कि उन्हें जो कुछ बूझ पड़ा है वह सब भक्तवर श्री रामाजी की ही देन है। अतएव, भक्तवर श्री रामाजी के साथ उनका सम्बन्ध उपरोक्त पृष्ठ भूमि में ही विचारणीय है। "को बड़ छोट कहत अपराधू।" हमारे चरित्रनायक की जीवन लीला की मोड़ जब, जिनके द्वारा, जिधर मुड़ने की थी, भगवत् इच्छा से सुनियोजित थी, उस लीला का प्रारम्भ प्रधानतः भक्तवर श्री रामाजी के उक्त सहुली ग्राम के मिलने से हुआ।

उस दिन सहुली ग्राम में रामायण गान के बाद भक्तवर श्री रामाजी के द्वारा हरिकीर्तन भी बहुत ही सुन्दर एवं सामयिक हुआ। कीर्तन के पदों का आधार लेकर श्री भक्तजी ने नित्य अनित्य की व्याख्या और भगवत भक्ति ही मानव जीवन का चरम लक्ष्य है इन सब बातों पर ऐसे प्रभावकारी ढङ्ग से प्रकाश डाला है कि हमारे चरित्रनायक का मन मानों चारों ओर से सिमिटकर भक्तवर श्री रामाजी में ही केन्द्रीभूत होने लगा। श्री भक्तजी तो कीर्तन के बाद चलते बने, पर हमारे चरित्रनायक का मन छिना-सा गया। रात्रि भर निद्रा नहीं आ सकी। इस घटना ने तो हमारे चरित्रनायक को गृह त्याग की प्रेरणा प्रचुर मात्रा में दी और आगे किसी उपयुक्त अवसर की प्रतीक्षा में ही समय काटने लगे।

वह अवसर भी १९१५ में आ ही गया। ज्येष्ठ शुक्ल अष्टमी को हसनपुरवा ग्राम के श्री जगदीश नारायण की लड़की का शुभ विवाह निश्चित था। उस विवाह में निमन्त्रित होकर बारात के साथ भक्तवर श्री रामाजी भी वहाँ पधारे, उधर उसी ग्राम में रामायण मंडली का भी साप्ताहिक रायायण गान रात्रि में हो रहा था। उस ग्राम के श्री ठाकुर पांडेय ने हमारे चरित्रनायक से भक्तवर श्री रामाजी के आने की बात सुनायी। यह जानकर हमारे चरित्रनायक तो विह्वल से हो गये और रामायण मंडली के बीच कीर्तन करने के लिये श्री रामाजी से अनुरोध करने चल पड़े। उस समय बारात में एकत्रित लोगों के बीच भक्तवर श्री रामाजी का कीर्तन एवं प्रवचन चल रहा था उन्होंने "बेटा बेचवा" विषय पर बोलते हुए जोरदार शब्दों में ऐसा कहा कि यदि ब्राह्मण समुदाय "बेटा बेचवा" के घर विवाह सम्बन्ध नहीं करावे तो बहुत अच्छा होता। दुलहे के पिता ने हमारे चरित्रनायक की ओर संकेत करते हुए कहा कि इन्हीं के चाचा तो इस विवाह में उपरोहित का कर्म करेंगे। यह सुनते ही हमारे चरित्रनायक के हृदय पर मार्मिक आघात पहुँचा। उन्होंने अनुभव किया कि ऐसी बातें बतलाकर बारात वाले श्री रामाजी को रामायण मण्डली में कीर्तन करने को नहीं जाने देंगे। ऐसा सोच आते ही हमारे चरित्रनायक आवेश से भर गये। उन्होंने चिल्लाकर दोनों हाथ उठाते हुए कहा "मैं तो यही जानता था कि बेटी बेचना पाप है पर अभी श्री भक्तजी ने बतलाया कि बेटा और बेटे के लिये रुपया कमाना बड़प्पन की निशानी है।

बेचना पाप है। अतएव, मैं सभी के समक्ष प्रतीज्ञा करता हूँ कि आज से ऐसे अवसर पर उपरोहिती कर्म नहीं करूँगा।" इस भाव भरे संकल्प का श्री रामाजी के हृदय पर भी गहरा प्रभाव पड़ा। वे भी आवेश में आकर दौड़ पड़े और हमारे चरित्रनायक को जो दूर खड़े थे, अपनी गोद में उठा लिया और उन्हें चारों ओर घुमाते हुए कहा "एक हीरा पाया। एक हीरा पाया।"

इसके बाद श्री भक्तजी के अनुरोध पर बारात के लोग हमारे चरित्रनायक के घर कीर्तन में चल पड़े और बारात एकदम फीकी पड़ गयी। कीर्तन होने के बाद भगवान् को दूध, दही, घृतादि से पञ्चामृत बनाकर स्नान कराया गया और महान भोग तथा पक्के आम के फल भोग लगाकर सबों को प्रसाद वितरण किया गया। पश्चात् भगवान् को शयन करा, दो थाल प्रसाद सजाकर एक थाल में श्री रामाजी से प्रसाद पाने का अनुरोध किया गया। हमारे चरित्रनायक के बार-बार आग्रह करने पर भक्तवर श्री रामाजी ने उनके हाथों से अपने हाथ में लेकर केवल शीथ प्रसाद ही पाया। सोने के समय दोनों एक ही टाट पर सो गये। सोते समय श्री भक्तजी के मुख से ये शब्द उच्चरित हुए "सिंह होकर सियार न होना।" भक्तजी के ये शब्द हमारे चरित्रनायक के लिये उपदेशात्मक नहीं थे, बल्कि इन शब्दों के द्वारा उन्हें यह याद दिलाया गया कि नररूप में हमारे चरित्रनायक को आगे अब क्या लीला करनी है। उसी के अनुसार आगे कदम उठाने का संकेत उपरोक्त शब्दों में था। ऐसी घटना विख्यात सन्त गुरु गोरखनाथ के जीवन में भी आयी थी, जब उनके गुरुदेव गुरु मच्छीन्द्रनाथ कुछ काल के लिये लीलावश एक राजा के शरीर में काया प्रवेश कर राजसुख भोगने लगे। गायक के वेष में गुरु गोरखनाथ साज-बाज के साथ राज दरबार में गये और वहाँ उन्होंने यह गान "जाग मच्छीन्द्र गोरख आया" गाकर गुरु मच्छीन्द्र नाथ को राजा का शरीर त्यागने की याद दिलायी। लीला विहारी हर सन्त के जीवन में बराबर ही किसी माध्यम से यह संकेत मिलता है कि आगे लीला में क्या करना है। ठीक इसी प्रकार की बात हमारे चरित्रनायक के जीवन में घटती गई। आगे चौदह साल के जीवन में भक्तवर श्री रामाजी द्वारा ही प्रधानतः सुझाव संकेत मिलता जायगा और उनकी उपासना का मार्ग प्रस्तुत होता जायगा।

तृतीय खण्ड

गृहत्याग तथा श्री अवध आगमन

गृहत्याग—उस रात्रि को प्रातःकाल ही भक्तवर श्री रामाजी हमारे चरित्रनायक के घर से उठकर चले गये, पर उनके संकेतानुसार दूसरे ही दिन भावी ने अपना रूप धारण कर ही लिया। हमारे चरित्रनायक के चाचा ने अपने यजमान के घर विवाह में कोई कर्मठ विधि कराने के लिये हमारे चरित्र-नायक को ही आदेश दिया। ऐसा करने में हमारे चरित्रनायक ने असमर्थता प्रकट की, तब चाचा जी ने क्रोध में आकर कुछ व्यङ्ग शब्दों का प्रयोग किया। फलस्वरूप हमारे चरित्रनायक ने गृहत्याग का निर्णय ले लिया। इन्होंने भक्त विभीषण की नाईं देखा कि परिवार बिल्कुल प्रतिकूल बन रहा है और आगे जो होना है वह परिवार के बन्धन में रहकर सम्भव नहीं है। अतएव "मैं रघुवीर शरन अब, जाउँ देहु जनि खोरि।" उपरोक्त परिस्थिति में गृह त्याग के अतिरिक्त दूसरा कोई विकल्प हमारे चरित्रनायक के समक्ष नहीं था। पर इनकी धर्मपत्नी इस घटना के छः मास पूर्व ही गौने में आयी थीं। पति के द्वारा गृहत्याग की बात सुनकर उन्होंने भी अपने पतिदेव से साथ ले चलने का अनुरोध किया। उनके हृदयस्थ भाव से यही प्रतीत हुआ कि वे अलग नहीं रह पायँगी-"जिय बिनु देह नदी बिनु वारी, तैसिअ नाथ पुरुष बिनु नारी।" पतिदेव ने उन्हें साथ ले चलना तो स्वीकार किया, पर उन्होंने एक कड़ी शर्त चलने में लगा दी। उनसे

कहा गया कि जो भी निजी धन, बक्सा, वस्त्र-आभूषणादि मयके या ससुराल से मिला हो अथवा शरीर पर जितने गहने हैं' उन सबों को यहीं छोड़ दो तभी साथ चलना सम्भव होगा। धर्मपत्नी ने सब त्यागना स्वीकार किया पर, पतिदेव को छोड़ना स्वीकार नहीं किया। चलते समय गले में एक हँसुली थी जो सोहागिन स्त्रियों के लिये सुहाग का एक चिन्ह माना जाता है। पर उसे भी पतिदेव की आज्ञा से ग्राम में ही किसी के हाथ पाँच रुपये में बेच दी गयी। प्रस्थान सूर्योदय के पूर्व ही हुआ, ताकि कोई जान न सके। हमारे चरित्रनायक के गृहत्याग की घटना ठीक उसी प्रकार की है जैसी कि भक्त श्रेष्ठ महात्मा श्री पीपाजी के गृहत्याग के अवसर पर हुई थी। उनकी भी सबसे छोटी धर्मपत्नी श्री सिया सहचरी जी ने अपने बहुमूल्य वस्त्र-आभूषणों का त्यागकर श्री पीपाजी के साथ जाना स्वीकार किया था।

मात्र पाँच रुपये ही रेल किराया के लिये हमारे चरित्र नायक के पास उपलब्ध थे। किराये की इस राशि से गोरखपुर तक ही दो प्राणी के लिये रेल टिकट मिल पाया। रेल डब्बे में कुछ सेठ साहुकार मिले, जिनसे धर्म चर्चा एवं सत्संग में सानन्द समय कटता गया। ज्यों ही हमारे चरित्रनायक गोरखपुर स्टेशन पर ट्रेन से उतरने लगे, त्यों ही यात्रियों ने कहा कि आप तो श्री अवध जाने वाले हैं, यहीं क्यों उतर पड़े ? कारण बतलाने पर उन लोगों ने मणिकापुर तक का टिकट कटवा दिया और वहाँ तक साथ चलने का आग्रह किया। इसे भगवान् की मर्जी समझ कर हमारे चरित्र नायक ने स्वीकार किया।

श्री अवध आगमन :—हसनपुरवा से प्रस्थान अपनी जन्म तिथि ज्येष्ठ शुक्ल दसमी (गङ्गा-दशहरा) को ही हुआ था। अब मणिकापुर से दोनों प्राणी पैदल ही चलकर श्री अयोध्या नगरी श्री सरयू तट पधारे। आते ही श्री सरयू जी तथा श्री अवध धाम को उन्होंने साष्टांग दण्डवत् किया। बाद श्री सरयू स्नान किया। आज एकादशी व्रत था। अतएव, पास के छः आने पैसे में से एक आने का भोग सामान क्रय किया गया और भोग लगाया गया। प्रसाद का कुछ अंश तो कछुए को पवाया गया और शेष को युगल जोड़ी स्वयं पाकर नगर प्रवेश के लिये चल पड़े। जान परिचय तो कहीं था ही नहीं। श्री स्वर्गद्वारीघाट से ही श्री हनुमत निवास की ओर जाने वाली सड़क से चल पड़े। रास्ते में टिकरा मन्दिर मिला, जहाँ दोपहर के रागभोग के बाद मन्दिर द्वार तो बन्द हो चुका था पर प्रवेश द्वार खुला था। हमारे चरित्रनायक ने उसी में प्रवेश कर अपनी धर्मपत्नी को बैठा दिया और एकादशी फलाहार के लिये सिर्फ डेढ़ आने का "भुइया" (एक प्रकार की सब्जी) ले आये। इसी को उबालकर श्री ठाकुर जी को भोग लगाया गया। बाद स्वयं प्रसाद पाने लगे। ठीक उसी समय मन्दिर की ठकुराइन को किसी ने बतलाया कि दो आगन्तुक मन्दिर के प्रांगण में आये हुए हैं। ठकुराइन ने तुरन्त बाहर आकर हमारे चरित्रनायक से पूछा कि आप कहाँ से आये हैं ? भोजन के समय मौन रहने का संकल्प था। अतएव, हमारे चरित्रनायक ने संकेत किया कि भोजन के बाद बतलाऊँगा। उनके प्रसाद पाने के बाद उनकी धर्म-पत्नी ने उनका चरणामृत पानकर उनके द्वारा छोड़ा हुआ शीथ प्रसाद ही पाया। हमारे चरित्र नायक ने मन्दिर की ठकुराइन को बतलाया कि वे श्री अवधवास के लिये आये हैं। पर, यहाँ उन्हें कोई जान परि-चय नहीं है। यह सुनकर मन्दिर के मालिक ने सहर्ष उन्हें अपने मन्दिर में आश्रय दिया और मन्दिर के पुजारी का कार्य-भार सौंप दिया, क्योंकि उस मन्दिर के पुजारी की मृत्यु कुछ दिन पूर्व हो गयी थी और एक काम चलाऊ पुजारी से काम लिया जा रहा था। इस मन्दिर में हमारे चरित्रनायक को एक ही व्यक्ति का भोजन दिया जाता था, जिसे मन्दिर विहारी को भोग लगाकर प्रसाद दम्पत्ति द्वारा पा लिया जाता था। इस प्रकार एक की खुराक में ही दोनों प्राणी पाकर कालयापन करने लगे। इस मन्दिर के निकट ही

हमारे चरित्रनायक को श्री अनन्त बाबा राम जिआवनदास जी तथा श्री हनुमत निवास के श्री अनन्त बाबा गोमती दास जी के दर्शन एवं सत्संग का सुख मिलता रहा।

श्री ठठेरा मन्दिर के पुजारी रूप में कार्य कलापः—इस प्रकार कुछ दिन बीतने पर उक्त महात्माओं द्वारा पता चला कि श्री ठठेरा मन्दिर में एक स्थायी पुजारी की बहाली होने वाली है और मन्दिर पञ्चायत के सदस्यगण एक सुयोग्य पुजारी की खोज में हैं। अनेकों लोगों के साथ हमारे चरित्र-नायक ने भी इस पुजारी पद के लिये अपना नाम दर्ज करवाया। एक दिन मन्दिर पञ्चायत के अधिका-रियों ने आवेदकों की परीक्षा ली और साक्षात्कार किया। हमारे चरित्रनायक को श्री गीता पाठ करने को कहा गया। उन्होंने धारा प्रवाह गीता पाठ किया, जिससे सभी प्रभावित हो गये। यों तो हमारे चरित्र-नायक से भी अधिक विद्वान् लोग आवेदकों में थे। किन्तु साक्षात्कार के समय किये गये प्रश्नों का जो सार-गर्भित उत्तर हमारे चरित्रनायक ने दिया उससे अधिकारी वर्ग को ऐसा आभास मिला कि कोई अज्ञात महान् सन्त ही इस रूप में पुजारी बनने आ गये हैं। वेतन के सम्बन्ध में पूछ-ताछ होने पर अन्य आवेदकों ने तो भिन्न-भिन्न रूप से पर्याप्त वेतन की माँग की। पर हमारे चरित्रनायक ने तो एक विलक्षण ही उत्तर दिया। उन्होंने कहा कि यदि मुझे वेतन रूप में धनोपार्जन करना होता तो घर पर ही रहता, क्योंकि खाने पहनने के लिये पर्याप्त पैतृक सम्पत्ति है। यदि अधिक पैसे का लोभ होता तो उस उद्देश्य की पूर्ति के लिये मैं कलकत्ता, आसाम आदि क्षेत्रों में ही जाता, जहाँ लोगों को कोई-न-कोई रोजगार मिल जाते हैं। मैं तो पैतृक सम्पत्ति, तन के रिश्ते, घर परिवार त्यागकर मन का रिश्ता श्री सीताराम जी से जोड़ने के लिये उनकी पावन नगरी में आया हूँ। यदि आप श्री कनक भवन के निकट अपने मन्दिर में श्री सीता-राम जी की सेवा–पूजा के साथ-साथ सन्त एवं भक्तों के दर्शन एवं उनकी सेवा–पूजा का सुयोग मुझे प्रदान करेंगे, तो इसी को मैं अपना परम सौभाग्य समझूँगा। श्री अवध वास, सेवा–पूजा से बड़ा और कौन धन है जिसकी माँग मैं आपसे वेतन के रूप में करूँ। पुजारी पद पर बहाल होने पर जो भोग श्री मन्दिर विहारी को लगेगा वही प्रसाद मैं पाऊँगा और समय-समय पर जो वस्त्र उन्हें अर्पण होंगे उसी से एक आध टुकड़ा लेकर मैं अपना अंग ढँप लूँगा। मेरे इष्टदेव श्री सीताराम जी युगल जोड़ी हैं और मैं भी युगल जोड़ी इनकी सेवा पूजा के लिये आया हूँ। हमारे चरित्रनायक के इस उत्तर के बाद अन्य किसी की बहाली का प्रश्न ही नहीं उठा। सभी गण्य मान्य महात्माओं ने भी पुजारी पद पर इनकी बहाली का समर्थन किया।

इस प्रकार हमारे चरित्रनायक टिकरा मन्दिर में इक्कीस दिन सेवा–पूजा करने के बाद बाइ-सवें दिन १६ अषाढ़ सन् १९ १५ ई० से श्री ठठेरा मन्दिर के पुजारी बने। मन्दिर पञ्चायत ने स्वेच्छा से उन्हें तीस रुपये माहवारी देना आरम्भ किया और आगत भक्त प्रेमियों द्वारा भी कुछ न्योछावर मिलते गये। पर इन पैसों को उन्होंने निजी कार्य के लिये व्यय करना स्वीकार नहीं किया। बल्कि उक्त राशि से मन्दिर में ही स्थान का विस्तार कर कोठरियाँ बनवा दीं और सन्त–सेवा में ही उन पैसों का व्यय किया। यही कारण है कि आज भी इनका शुभ नाम उस मन्दिर में सादर स्मरण किया जाता है।

कहा जाता है कि हमारे चरित्रनायक से कतिपय लोगों ने उनके श्री अवध आगमन के बाद यह प्रश्न किया था कि जब संसार त्याग श्री अवध चले ही आये तब अपनी धर्मपत्नी को क्यों साथ लाये। इस प्रश्न की चर्चा करते हुए उत्तर में हमारे चरित्रनायक यह कहा करते थे कि तत्कालीन भक्तवर श्री रामा जी महाराज स्वयं गृहस्थाश्रम में होते हुए भी श्री अवध के महान् सन्तों द्वारा एक उच्च कोटि के सन्त में गिने जाते थे। उनका निजी संसार और परिवार प्रतिकूल होते हुए भी उनकी भक्ति साधना में बाधक नहीं बन सका। शास्त्रों एवं भक्ति ग्रन्थों में भी भगवत्-भक्ति के लिये धर्मपत्नी या परिवार का

त्याग अनिवार्य नहीं बतलाया गया है। सचमुच में हम भारतीय तो ऋषि सन्तान ही हैं और आज भी हम लोगों का गोत्र साण्डिल्य, भरद्वाज आदि मुनियों के नाम पर चला आ रहा है। उन महान् पूर्व पुरुषों का सपत्नीक जीवन भक्ति साधना में बाधक नहीं हुआ। बल्कि दाम्पत्य जीवन ऐसा आदर्श बना रहा कि भक्ति साधना में दोनों एक दूसरे के पूरक बने रहे।

इस संदर्भ में वे यह भी कहा करते थे कि केवल राम विरोधी या राम विमुख परिवार का ही त्याग भक्तों ने प्राचीन काल में किया है। यह भी तभी हो पाया है जब परिवार के सदस्यों का विरोध भक्ति साधना में चरम सीमा पर पहुँच गया। इस प्रसङ्ग में भक्तवर मीराबाई का उदाहरण उल्लेखनीय है। राजा परिवार में अनेक यातनाओं को भोगने पर भी वह तब तक पति-परिवार का त्याग नहीं कर सकी जब तक कि राणा ने मीराबाई को विष का प्याला नहीं दिया। उस विषय के प्याले का पान वह बिना अपने इष्टदेव को भोग लगाये नहीं कर सकती थी। बेबसी में विष का भोग अपने प्यारे प्रभु को लगाकर स्वयं पान करना ही पड़ा। जिस परिवार के चलते अपने प्यारे प्रीतम को विष का भोग लगाना पड़े क्या ऐसे परिवार का त्याग उचित न होगा ? इस प्रश्न पर कहा जाता है कि तत्कालीन सन्त गोस्वामी तुलसी दास जी का परामर्श श्री मीराबाई को एक पद के रूप में प्राप्त हुआ, जिसकी प्रथम पंक्ति यों है "जा के प्रिय न राम वैदेही, तजिके ताहि कोटि बैरी सम यद्यपि परम सनेही।" उक्त पद की पंक्ति यों में उदाहरण देकर यह बतलाया गया है कि मीराबाई के समान वाली परिस्थित में ही भक्ताचार्य श्री भरत लाल जी ने माता का त्याग, भक्त प्रह्लाद ने पिता का, श्री विभीषण जी ने भाई का तथा व्रज वनिताओं ने पति का त्याग किया था। इस प्रकार का त्याग होने पर भगवत् कृपा से त्यागी एवं त्यक्त दोनों का ही समान कल्याण किया गया। इसी परामर्श के बाद शायद मीराबाई पति गृह का त्याग कर श्री वृन्दावन धाम चली गयीं।

जहाँ तक हमारे चरित्रनायक का सम्बन्ध है, यहाँ तो परिस्थिति ही भिन्न थी। हमारे चरित्रनायक की धर्मपत्नी श्रीमती जानकी देवी एक धर्म परायणा पतिव्रता महिला थीं। इनने चढ़ती जवानी में ही मयके-ससुराल के सभी सुख को त्याग कर बहुमूल्य वस्त्राभूषणों का भी त्याग कर दिया और हर अवस्था में पतिधन को ही अपना सबसे बड़ा धन समझा। उन्हीं की सेवा पूजा के लिये घर से बाहर निकल पड़ीं। जानकार लोगों ने बतलाया है कि वे इतनी भोली-भाली थीं कि उन्हें छव-नव तक भी गिनना नहीं आता था। भगवत् सेवा के लिये जो पैसे उन्हें रखने के लिये मिलते उसे वे दूसरों से गिनवातीं और पहचान करवाती थीं। लगता है कि उन्हें तो भक्ति-साधना करनी ही नहीं थी। बल्कि, जन्मजात ही उनके स्वाभाविक आचरण में एक उच्चकोटि के भक्त के लक्षण परिलक्षित थे। पतिदेव जिन कार्यों से प्रसन्न रहें उन्हीं में लगा रहना उनकी दैनिक चर्या बनी। हमारे चरित्रनायक ने जब मन्दिर समिति से वेतन लेना स्वीकार नहीं किया और न अलग से अन्न वस्त्र की ही माँग की तो भी इसके परिणाम से क्या यातना हो सकती है इसकी चिन्ता किंचित् मात्र भी माता जानकी देवी को नहीं सता सकी। हमारे चरित्रनायक यह भी कहते थे कि प्रथम तो वे अपने विवाह के विरोधी थे। परन्तु, पिता रूप चाचा की बात मानकर जब उन्होंने श्रीमती जानकी देवी को पत्नी रूप में स्वीकार किया तो विना उपयुक्त कारण के भक्ति साधना के नाम पर पत्नी का त्याग अनैतिक एवं अनावश्यक ही होता। सौभाग्यतः वह तो सदा अनुकूल रह कर श्री सीता राम जी की सेवा पूजा में बराबर हाथ बटाती रहीं। इसीलिये जब तक भार्या जीवित रहीं हमारे चरित्रनायक ने गृहस्थ पुजारी के रूप में ही अपने को श्री अवध में रखा विधिवत् संस्कार कर उन्होंने लँगोटी अँचला विरक्त साधु के रूप में धारण नहीं किया।

श्री अवध में दम्पत्ति की दैनिकचर्या—जिस दिन से हमारे चरित्रनायक ने श्री अवध धाम में निवास पाया, उस दिन से उन्होंने सन्त-सेवा को ही प्रथम स्थान दिया। पर साथ ही कँगला-सेवा को भी उनने कम महत्व नहीं दिया। उनका यह आचरण श्रीकागभुसुण्डि जी की इस उक्ति 'मोरे मन प्रभु अस विश्वासा, राम ते अधिक राम कर दासा' के अनुरूप ही था। स्वयं श्री रामभद्र जू ने भी ऐसा ही कहा है 'मो ते अधिक सन्त कर लेखा' इष्टदेव के इस कथन को चरितार्थ करने के लिये ही हमारे चरित्र नायक ने अपनी दैनिक चर्या का आरम्भ ही इस प्रकार से किया। उपरोक्त चौपाइयों में निहित भाव से, ओतप्रोत होने के कारण ही, हमारे चरित्रनायक अपने लीला-काल के आरम्भ से अन्ततक गृहस्थ भक्त होते हुए भी भक्तवर श्री रामा जी को एक महान सन्त के रूप में जानते एवं मानते रहे। इनकी भक्ति भावना, जाति पाँति कुल मान बड़ाई' आदि से कहीं ऊँची थी और किसी प्रकार के भेदभाव को भक्तों के सम्बन्ध में उन्होंने कभी भी अपने हृदय में प्रश्रय नहीं दिया।

वे प्रातः काल ३–४ बजे उठते शुद्ध मिट्टी और पर्याप्त संख्या में, वृक्षों से पूर्व में ही तोड़कर रखे दंतवन अपने साथ लिये श्री सरयू तट चले जाते, वहाँ पहले से पड़े हुए दंतवन के टुकड़ों को बँटोर कर घाटों से दूर फेंकते, प्रधान घाटों को झाड़ू देकर सफाई करते और जगह-जगह पर शुद्ध मिट्टी और दंतवन रख छोड़ते। उनकी निश्चित धारणा थी कि श्री अवध के महानसन्त उसी वेला में श्री सरयू तट आकर स्नान करते हैं। अतएव, देरकर आने से उन सन्तों के दर्शन एवं सेवा का सुयोग हमारे चरित्रनायक को नहीं मिल पाता। वे यह सेवा वर्षों तक करते रहे। पूर्व पृष्ठों में उल्लिखित आरम्भिक जीवन लीला की घटनाओं से यह स्पष्ट-सा हो जाता है कि बिना किसी साधना के ही हमारे चरित्रनायक का भक्ति-भाव एवं भक्ताचरण आरम्भ काल में ही उस स्तर तक पहुँचा हुआ था, जहाँ अन्य साधक साधारणतः अनेकानेक साधना, संयम नियम करने के बाद पहुँच पाते हैं। साधना करने के बाद भी हमारे चरित्रनायक जैसा त्याग वैराग्य और प्यारे प्रभु से अनुराग का स्तर अच्छे-अच्छे साधक शायद ही प्राप्त कर पाते हैं। इसीलिये यह अनुमान निर्विवाद साफ हो जाता है कि हमारे चरित्रनायक किसी साधना के द्वारा नहीं बने, बल्कि हर प्रकार से सन्त एवं भक्त आचरण करने के लिये स्वयं बने हुए आये थे। सचमुच ही वे श्री सिया स्वामिनी जू के नित्य पार्षदों में एक थे और आवश्यकतानुसार ही अवसर-अवसर पर उन्होंने अपने में ही निहित दिव्य आचरणों को प्रगट किया एवं लोक शिक्षा के लिये उन्हीं दिव्य आचरणों को धारणा कर एक उच्चकोटि के सन्त, भक्त एवं प्रेमी का आदर्श विश्व के सामने प्रस्तुत किया। मान और सुख से लगता है उनका कोई सम्बन्ध ही नहीं था। वे उपदेश में कहा भी करते थे 'सेवक सुख चह मान भिखारी।' उन्होंने तो भौतिक सुख एवं मान मर्यादा को चढ़ती जवानी में ही तिलांजलि देकर अपनी भक्ति-लीला आरम्भ की। उन्हें साधना के द्वारा और कुछ प्राप्त करना रहा ही नहीं। अतएव, नाम जप के सिवा और कोई साधना करते उन्हें कभी किसी ने नहीं देखा। आगे आने वाली घटनाओं से तो यह तथ्य हर प्रकार से सत्यापित हो जायगा।

श्री अवध में दम्पत्ति के बीच मन्दिर की सेवा-पूजा सम्बन्धी कैंकर्यों का भी बँटवारा कर लिया गया। अपनी भार्या के हिस्से में चौका वर्तन की सफाई, पूजापार्षदों की सफाई तथा ठाकुर जी के लिये बाल भोग से लेकर राज भोग तक की तैयारी करने का भार दिया गया। मन्दिर में जगमोहन की सफाई भी माताजी ही कर लिया करती थीं। हमारे चरित्रनायक ने स्वयं भीतर मन्दिर की सफाई तथा ठाकुर जी को जगाने से लेकर सुलाने की सेवा का भार अपने जिम्मे रखा। दोनों समय के शृंगार, पूजा एवं आरती के बाद मन्दिर प्रांगण में नियमपूर्वक दो घण्टा नाम कीर्तन एवं पदगान हमारे चरित्रनायक स्वयं

करते कराते रहे, जिससे आकर्षित होकर अनेक सुयोग्य भक्तगायक एवं रसिकों का जमघट उनके पास बढ़ता ही गया। अपराह्न में हमारे चरित्रनायक उन दिनों के प्रसिद्ध सन्त महात्माओं के पास जाकर श्री गोस्वामी जी की रामायण, विनयपत्रिका आदि ग्रन्थों का अर्थसत्संग किया करते थे और कथाश्रवण करने भी सन्ध्या में जाया करते थे। इस प्रकार रहते-रहते आप सभी सन्तों के प्रिय बन गये और श्री अवध में श्री पुजारी जी के नाम से विख्यात हो गये। श्री अवध में 'पुजारी जी' कहने से इन्हीं का बोध होता था।

श्रीमती माता जानकी देवी की रहस्यमय विशेषतायें—दम्पत्ति के बीच सेवा कार्य का बँटवारा हो जाने पर भी माता जानकी देवी को श्री ठाकुर जी के श्रृंगार सजावट एवं भोग के सम्बन्ध में कभी-कभी कोई बात खटक जाती थी और इस सम्बन्ध में हमारे चरित्रनायक से उनका मतभेद तक हो जाया करता था। माता जी अपने पतिदेव से आग्रहपूर्वक कहती थीं की एक ओर तो आप अपने ठाकुर को दुलहिन-दुलहा रूप में ध्यान करते हैं, अपने प्रीतम की 'नौशे' बबुआ कहकर पुकारते हैं, पर दूसरी ओर कभी-कभी आप मामूली पोशाक पहना देते हैं और रूखा सूखा भोग लगा देते हैं। यह बात हमसे सही नहीं जाती। भला, अपने बेटी-दामाद को कोई कैसे मामूली पोशाक पहनावेगा साधारण भोजन पवावेगा। माताजी को अनुराग भरी बातों से हमारे चरित्रनायक आश्चर्य चकित हो जाते, परन्तु हँसते हुए उन्हें समझाते कि जब जो उपलब्ध हो अपने ठाकुर को उसी से प्रसन्न रखना है। माताजी का मन्दिर विहारिणी-विहारी जू से आन्तरिक सम्बन्ध इतना घनिष्ठट हो गया था कि वे लोगों की आँख बचाकर मन्दिर द्वारा पर बैठकर श्रृंगार का अवलोकन करती रहती थी। कहा जाता है कि कभी-कभी मन्दिर के ठाकुर ठकुराइन से उन्हें हँस-हँसकर बातचीत करते तक पाया गया। मन्दिर में महिला का प्रवेश निषेधित था, तो भी एक दिन की घटना ऐसी हुई की किसी ने माता जानकी देवी को मन्दिर से निकलते हुए देख लिया। इसकी शिकायत हमारे चरित्रनायक तक पहुँचायी गयी। उनके द्वारा पूछताछ करने पर भोली-भाली माताजी ने ससंकोच उत्तर दिया कि जब स्वयं श्री किशोरी जी केश सजावट करने के लिये बुलाती हैं तो वे उनकी आज्ञा का अपमान कैसे करें। हमारे चरित्रनायक तो यह सुनकर करुणा से भर गये और रो पड़े। आगे कुछ कहने की हिम्मत नहीं हुई। जानकार लोग तो यहाँ तक कहते पाये गये हैं कि तुलना में हमारे चरित्रनायक से माताजी 'बीस' ही थी। 'यथा नाम तथा गुण' का उनमें होना स्वाभाविक ही है। हमारे चरित्रनायक के शुभ नाम का प्रथम खण्ड 'राम' और द्वितीय खण्ड 'शंकर' है। पर माताजी के नाम में केवल 'जानकी' है। यदि ऐसे 'राम जानकी' की जोड़ी के प्रति यह कहा जाय कि 'ज्ञान भक्ति जनु धरे शरीरा' तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी। दोनों का अवतार एक दूसरे के पूरक रूप में ही हुआ।

चतुर्थ खण्ड

उपासना प्रणाली में श्री सीताराम विवाह-कलेवा-पूजन उत्सव का समावेश—

हमारे-चरित्रनायक की जीवन-लीलाओं में जो कुछ भी नवीनता, विशेषता या रूपांतर जिन माध्यमों से हुआ उन माध्यमों में भक्तवर श्री रामाजी का प्रथम स्थान है। हमारे चरित्रनायक के श्री अवध आने पर उनका आंतरिक सम्बन्ध भक्तवर श्री रामाजी के साथ और भी घनीभूत होता गया। हमारे चरित्रनायक के श्री अवध आने के पूर्व से ही श्री भगतजी श्री अवध आया जाया करते थे और यहाँ रहकर संत महात्माओं को समय-समय पर श्री सीताराम विवाह-कलेवा-पूजन उत्सव का आयोजन कर आनन्द लिया करते थे। श्री भक्तजी हृदय से अपने को मिथिलावासी मानते थे। वे जीवन पर्यन्त युगल विवाह लीला, कलेवा तथा

श्री युगल सरकार के श्री चरणों में, भक्तवर श्री रामाजी महाराज